ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वार्षिक मूल्य : 100 रुपये

वर्ष 55 अंक : 8 | जून 2009 | मूल्य : 10 रुपये

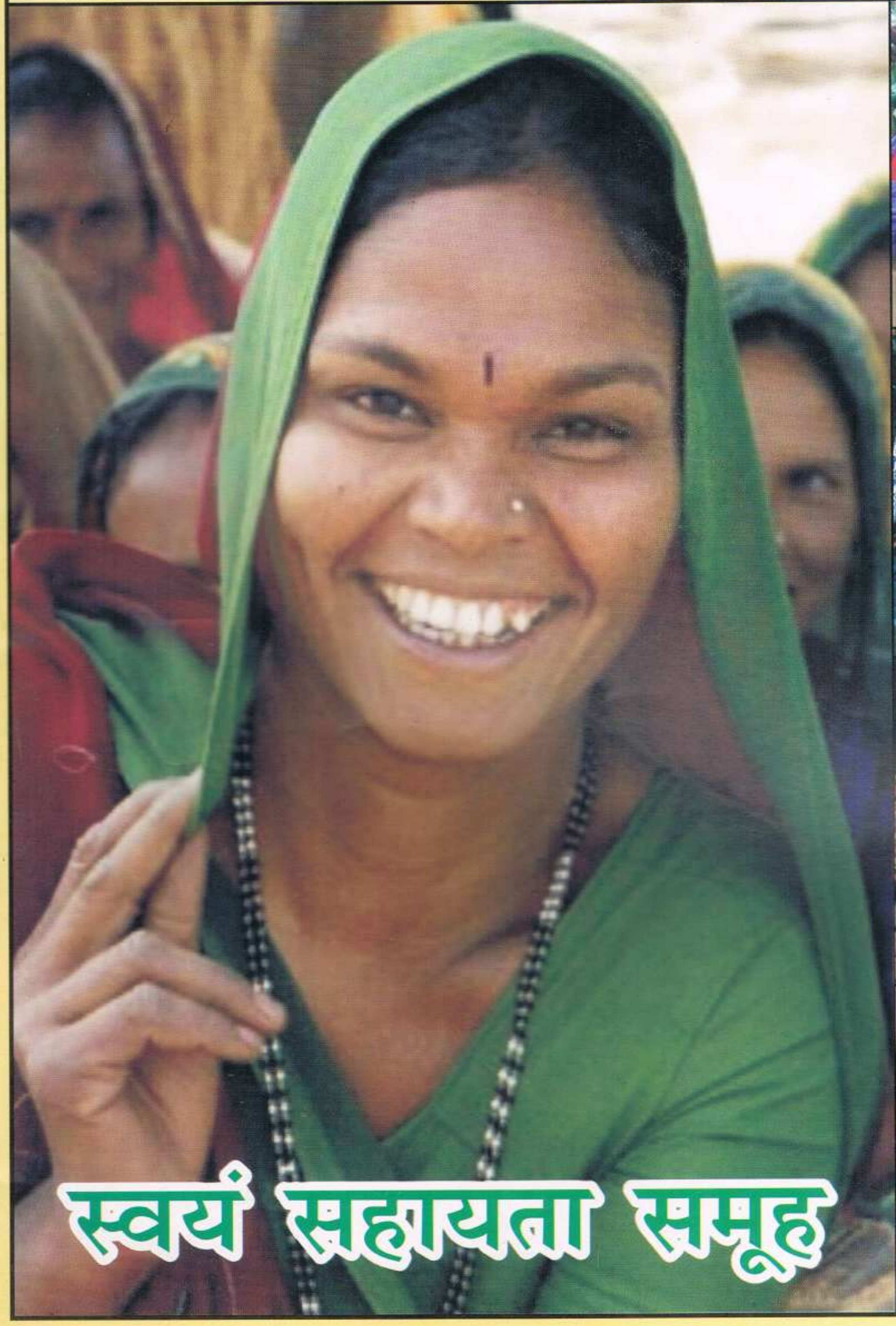

स्वयं सहायता समूह

परिवार के साथ छुट्टियां मनाने की सोच रहे हैं।

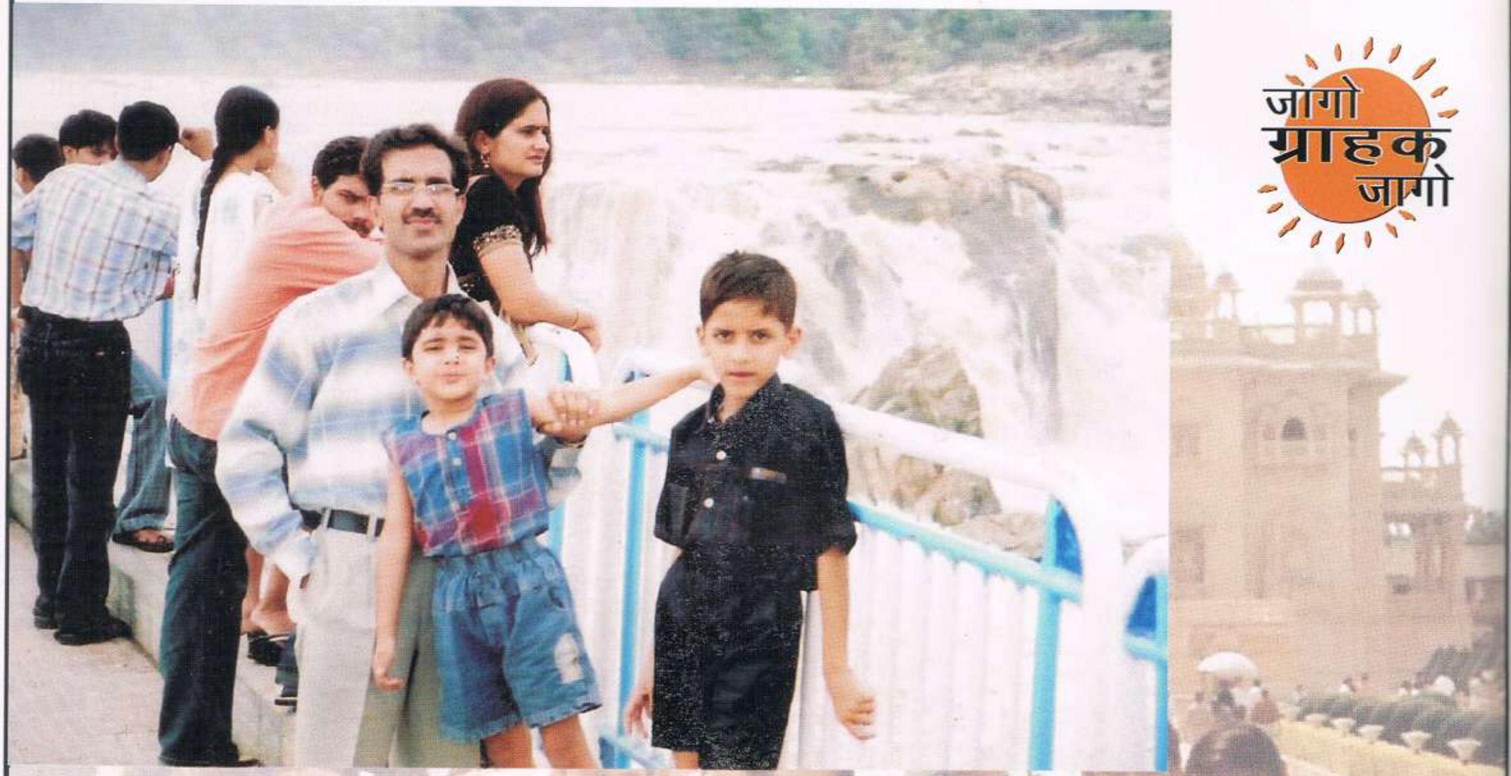

जागो ग्राहक जागो

हालीडे पैकेज खरीदने से पहले ध्यान रखें....

- केवल अधिकृत ट्रैवल एजेंट की सेवाएं लें
- अनुमोदित टूर आपरेटरों की सूची देखने के लिए www.tourism.nic.in और www.incredibleindia.org पर लॉग आन करें।
- मौखिक अनुबंध न करें।
- विज्ञापनों में किए गए बड़े–बड़े दावों से भ्रमित न हों।
- अनुबंध की शर्तों को ध्यानपूर्वक पढ़ लें।

उपभोक्ता राष्ट्रीय हेल्पलाइन नंबर
1800–11–4000 (निःशुल्क) पर सम्पर्क कर सकते हैं।
(बीएसएनएल/एमटीएनएल लाइनों से)
अथवा 011–27662955,56,57,58 (सामान्य कॉल दरें)
(9.30 प्रातः से 5.30 सायं – सोमवार से शनिवार)

सत्यमेव जयते

जनहित मे जारी
उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
उपभोक्ता मामले विभाग, भारत सरकार
कृषि भवन, नई दिल्ली–110 001 : वेबसाइट : www.fcamin.nic.in

KH-6-09-2

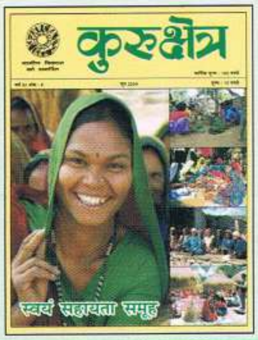

कुरुक्षेत्र

वर्ष : 55 ★ मासिक अंक ★ पृष्ठ : 48, ज्येष्ठ–आषाढ़ 1931, जून 2009

वरिष्ठ सम्पादक
कैलाश चन्द मीना

सम्पादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

उत्पादन अधिकारी
जे.के. चन्द्रा

व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in

आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और रजनी दवे

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

◆ भीलों की कुरीतियां मिटाता 'सम्पर्क'	डॉ. उदयसिंह	3
◆ डगर समूह ने दिखाई साक्षरता की राह	नवीन कुमार	8
◆ फिज़ां बदली कमल और गुलाब समूहों ने	उत्पल कांत	11
◆ महिलाओं को एकजुट करते स्वयंसहायता समूह	डा. सुखपाल श्रीवास्तव	15
◆ ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाता 'जीविका'	प्रवीण कुमार पाठक	21
◆ गरीबों को दिशा देता 'प्रदान'	ललिता खुराना	24
◆ कोटा साड़ी उद्योग के बढ़ते कदम	पूनम मेहता	27
◆ चुनौतियों को अवसर बनाते स्वयंसहायता समूह	निशा शर्मा	30
◆ स्वयंसहायता समूहों से बदलती गांवों की तस्वीर	मयंक श्रीवास्तव	33
◆ कैसे ले कपास की अच्छी फसल	डॉ. वीरेन्द्र कुमार	36
◆ ताईवानी पपीते की व्यावसायिक खेती	चन्द्रभान यादव	41
◆ विटामिन सी से भरपूर संतरा	आभा जैन	43
◆ आंवलाबाड़ी से मिला रोजगार	प्रतापमल देवपुरा	47

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

भारत में स्वयंसहायता समूह अपेक्षाकृत नया प्रयोग है। 1980 के दशक के अंत में कुछ स्वयंसेवी संगठनों ने आय सर्जक गतिविधियों के संचालन के लिए गरीब महिलाओं को संगठित करके स्वयंसहायता समूहों की शुरूआत की । सन् 1992 में राष्ट्रीय कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की पहल व विशेष रुचि लेने से आज स्वयंसहायता समूह पूरे देश में फैल चुके हैं। पिछले कुछ वर्षों में तो इनमें उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। स्वयंसहायता समूह सर्वाधिक तेजी से आंध्र प्रदेश में फैले हैं।

स्वयंसहायता समूह की अवधारणा 'संगठन में शक्ति' पर आधारित है। इन समूहों के गठन के पीछे मान्यता यह है कि बिखरे हुए लोगों को तो उत्पीड़ित व शोषित किया जा सकता है लेकिन यदि उन्हें संगठित किया जाए तो वे बड़ी ताकत बन जाते हैं। स्वयंसहायता समूह इस बात में विश्वास करता है कि लोग आपस में मिलजुलकर अपनी रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक कदम उठा सकें। ग्रामीण भारत में महिला स्वयंसहायता समूहों ने हजारों–लाखों गरीब तबके की महिलाओं को न केवल घर की चौखट से बाहर निकाला है बल्कि उन्हें आर्थिक स्वतंत्रता प्राप्त करने में भी समर्थ बनाया है। इसके साथ–साथ उन्हें 'सामूहिक आवाज' भी दी है।

देशभर में इस समय 35 लाख से अधिक स्वयंसहायता समूह हैं। इनमें से 90 प्रतिशत महिला स्वयंसहायता समूह हैं। ये स्वयंसहायता समूह औसतन 500 रुपये हर महीना बचाते हैं। दक्षिण भारत में खासतौर से आंध्र प्रदेश में स्वयंसहायता समूह एक आंदोलन का रूप ले चुके हैं। राज्य में स्वयंसहायता समूह बैंक लिंकेज प्रोग्राम का क्रियान्वयन सफलतापूर्वक हुआ है। अन्य राज्य सरकारें भी इससे प्रभावित होकर अपनी टीमों को कार्यकम के क्रियान्वयन के अध्ययन के लिए भेज रही हैं ताकि अपने यहां भी इस कार्यकम को लागू कर सकें।

ग्रामीण क्षेत्रों में तेजी से उभरते स्वयंसहायता समूहों के जरिए ग्रामीण महिलाओं में बचत को बढ़ावा मिला है जिसके चलते उन्हें सूदखोरों से छुटकारा मिला है। यही नहीं इन समूहों के जरिए उन्हें जरूरत के समय आसानी से ऋण मिल जाता है। दक्षिण भारत में आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, केरल आदि राज्यों में लोगों, सरकार और गैर–सरकारी संगठनों के सच्चे उत्साह और रुचि से आगे आने से स्वयंसहायता समूहों की अवधारणा बेहद सफल रही है। हालांकि शेष भारत में तस्वीर इतनी उज्जवल नहीं है।

दक्षिण भारत के कई समूहों को कई देशों से आर्डर मिल रहे हैं। ये समूह इंटरनेट के जरिए भी अपने उत्पाद बेच रहे हैं तथा जिला, राज्य, राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर प्रदर्शनी तथा मेलों आदि में भाग ले रहे हैं। आने वाले समय में इन समूहों का विकास और तेजी से होने की उम्मीद है और ये समूह देश की अर्थव्यवस्था में भी अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकेंगे।

निष्कर्ष रूप से अगर यह कहा जाए कि स्वयंसहायता समूहों के निर्माण की योजना भारत सरकार का एक क्रांतिकारी कदम है तो अतिशयोक्ति नहीं होगी। इनके जरिए न सिर्फ लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सकता है बल्कि एकजुट होकर सामाजिक कुरीतियों, नारी उत्पीड़न तथा ऊंच–नीच के भेदभाव को भी मिटाया जा सकता है। ग्रामीण गरीबों की आर्थिक उन्नति का सशक्त मंच बन कर उभर रहे इन समूहों की बदौलत ग्रामीण भारत की तस्वीर बदलने लगी है।

भीलों की कुरीतियां मिटाता 'सम्पर्क'

डॉ. उदयसिंह

स्वयंसेवी संगठन और स्वयंसहायता समूहों की गतिविधियों से भील समुदाय में बदलाव आए हैं, अच्छी परम्पराओं के विकसित होने के साथ-साथ उनकी आजीविका भी सुदृढ़ हुई है। ये लोग इस बात को स्वीकारने लगे हैं कि कुरीतियां उनके विकास में बाधक हैं। यह अपने आप में एक बहुत बड़ा बदलाव है। स्वयंसेवी संगठन और स्वयंसहायता समूहों की कर्मठता से उपजी यह सफलता एवं खुशहाली की कहानी झाबुआ जिले के एक विकासखण्ड की है जिसने भीलों की वर्षों पुरानी परम्पराओं को पुनर्जीवित कर आत्मसम्मान की भावना जाग्रत की है।

जनसंख्या की दृष्टि से देखा जाए तो सम्पूर्ण भारत की आदिवासी जनसंख्या का 14.5 प्रतिशत मध्य प्रदेश राज्य में निवास करता है। साथ ही, प्रदेश की कुल जनसंख्या की 20.3 प्रतिशत आबादी जनजातीय समुदाय की है। छत्तीसगढ़ राज्य के गठन के बाद प्रदेश में 46 जनजातियां शेष रह गयी थीं जिनमें से कीर, मीना और पारधी को भारत सरकार द्वारा अनुसूचित जनजाति की सूची से विलोपित कर दिया गया। इस प्रकार अब मध्य प्रदेश में कुल 43 जनजातियां शेष रह गयी हैं जिनमें गोंड जनजाति की जनसंख्या सबसे अधिक है तथा दूसरे स्थान पर ... है। इसके अतिरिक्त प्रदेश में तीन – बैगा, भारिया और ...या को विशेष पिछड़ी जनजातियों की श्रेणी में रखा गया है।

प्रस्तुत अध्ययन मध्य प्रदेश के पश्चिमी क्षेत्र के झाबुआ जिले पर आधारित है जो कि वृहद् स्तर पर किए गए अध्ययन का एक भाग है। जिले की कुल जनसंख्या का 86.8 प्रतिशत जनजातीय समुदाय का है। ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या के प्रतिशत को देखा जाए तो सम्पूर्ण मध्य प्रदेश में 73.5 प्रतिशत जनसंख्या गांवों में तथा 26.5 प्रतिशत जनसंख्या नगरों में निवास करती है जबकि झाबुआ जिले में 91.3 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण तथा केवल 8.7 प्रतिशत जनसंख्या नगरीय है। जिले में साक्षरता प्रतिशत को देखा जाए तो वह प्रदेश के अन्य जिलों की अपेक्षा बहुत ही कम है। प्रदेश का औसत साक्षरता प्रतिशत 67.3 है जबकि झाबुआ जिले में यह प्रतिशत 36.9 है। यदि जिले में ग्रामीण साक्षरता प्रतिशत को देखा जाए तो और भी

कम अर्थात 32.3 प्रतिशत ही है। ग्रामीण महिलाओं का तो पांचवां हिस्सा अर्थात 20.66 प्रतिशत ही साक्षर है। यह जिला 2 आदिवासी उपयोजना क्षेत्रों, 8 तहसीलों, 12 आदिम जाति विकासखण्डों, 812 ग्राम पंचायतों तथा 1313 गांवों में विभाजित है। जिले में मुख्य गांवों के अतिरिक्त नवीन सर्वेक्षण के अनुसार 8818 मंजरे, टौले तथा पारे भी हैं जिन्हें जिले में "फलियों" के नाम से जाना जाता है।

कुल मिलाकर यह जिला भौतिकीय एवं मानवीय दोनों ही दृष्टि से काफी पिछड़ा है। पहाड़ी ढलानयुक्त सख्त बंजर भूमि, सिंचाई साधनों की अनुपलब्धता, वर्षा पर पूर्ण निर्भरता, कृषि से सम्बन्धित आधुनिक साधनों एवं तकनीकी ज्ञान का अभाव, प्राकृतिक संसाधनों का विनाश और इन सब के प्रतिफल आजीविका के साधनों में कमी के कारण यहां निवासित जनजातियों के जीवन में निरन्तर अस्थिरता बनी हुई है।

जिले की जनजातियों के विकास में बाधक उपर्युक्त कारणों के अतिरिक्त एक महत्वपूर्ण कारण समाज की रूढ़िवादी परम्पराएं भी हैं। यह उल्लेखनीय है कि झाबुआ जिला भील बहुल है। यहां पर भीलों की चार उपजातियां – भील, भिलाला, बारेला और पटेलिया मुख्यतः निवास करती हैं। मोटे तौर पर जनसंख्या की दृष्टि से देखा जाए तो भील सबसे अधिक लगभग 80 प्रतिशत हैं। शेष करीब 20 प्रतिशत में तीनों उपजातियां समाहित हैं जिनमें भी पटेलिया की संख्या अधिक है। भील को छोड़कर शेष तीनों उपजातियों में शराब पीने की प्रवृत्ति, वधू मूल्य, नोतरा, मृत्युभोज जैसी सामाजिक कुरीतियां बहुत कम हैं। इन तीनों उपजातियों की करीब 80 से 85 प्रतिशत आबादी भगत (शाकाहारी) बन चुकी है। यदि क्षेत्र में इन तीनों उपजातियों की सामाजिक, आर्थिक और शैक्षणिक पृष्ठभूमि को तुलनात्मक रूप से देखा जाए तो वह भीलों से कहीं अधिक बेहतर है। निश्चित रूप से भीलों के पिछड़ा होने में ये सामाजिक कुरीतियां कहीं न कहीं अधिक बाधक हैं। इसके अतिरिक्त आधुनिक रहन–सहन के प्रभाव में आकर इस समुदाय ने कई उन परम्पराओं को भी विस्मृत कर दिया है जो इनके सहजीवन से निकली थी और आपसी सहयोग से पूर्ण की जाती थी जैसे – अड़जी–पड़जी, सहयोगी नुक्ता, आपसी बैठक में झगड़े सुलझाना आदि।

> समूहों, विशेषकर महिला समूहों की सदस्यों ने मद्यपान के खिलाफ पुरजोर आवाज उठाई और यह तय किया कि समूह का कोई भी सदस्य शराब नहीं पीएगा और अपने–अपने परिवार के सदस्यों के ऊपर भी शराब पीने पर प्रतिबन्ध लगाएगा। समूह सदस्यों की इस प्रतिबद्धता के सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। अधिकांश परिवारों ने शराब पीना बंद कर दिया है। इसके पश्चात समूह सदस्यों ने गांवों में शराब की दुकान बंद करवाने में भी सफलता प्राप्त की। एक अनुकरणीय उदाहरण पेटलावद विकासखण्ड के सेमलिया गांव में दिखाई दिया जहां शराब पीकर झगड़ा करने वाले लोगों की सरेआम महिलाओं ने मिलकर लाठियों से पिटाई की।

झाबुआ जिले के पेटलावद विकासखण्ड में लम्बे समय से कार्यरत स्वयंसेवी संगठन "सम्पर्क" ने इन परम्पराओं का प्रारम्भिक स्वरूप, समाज में इनका औचित्य, इनमें आए बदलाव के साथ–साथ समाज पर इन परम्पराओं के दुष्प्रभावों का गहन अध्ययन किया तथा यह सुनिश्चित किया कि बगैर सामाजिक व्यवस्था को सुधारे आर्थिक सुधार कार्यक्रमों का सफल होना मुश्किल है। वैसे भी कहा जाता है कि घड़े को भरने के लिए बाहर से पानी डालने के साथ–साथ उन छिद्रों को बन्द करना भी आवश्यक है जिनसे रिसकर पानी बाहर निकल जाता है। अतः भील समुदाय के विकास के लिए यह आवश्यक है कि उनकी सकारात्मक परम्पराओं को पुनर्जीवित किया जाए और उन पद्धतियों में बदलाव लाया जाए जो उनके आर्थिक जीवन पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं।

'सम्पर्क' स्वयंसेवी संगठन ने सर्वप्रथम डाक्यूमेंट्री फिल्मों, नुक्कड़ नाटकों, ग्रामसभा की बैठकों में इन परम्पराओं में आये बदलावों के दुष्प्रभावों को समाज के सम्मुख रखा। साथ ही इन परम्पराओं में किस तरह बदलाव लाया जाएगा और उस बदलाव के बाद क्या परिदृश्य होगा, इन बातों को भी समुदाय के मध्य रखा। जागरुकता कार्यक्रमों के फलस्वरूप समुदाय के बीच से परम्पराओं में बदलाव के लिए आवाज उठने लगी। यहीं से स्वयंसहायता समूहों के प्रयास की कहानी प्रारम्भ होती है।

'सम्पर्क' ने पेटलावद विकासखण्ड में करीब 400 स्वयंसहायता समूह बनाये और इन सभी समूहों को ग्रामोत्सव, ग्राम सम्मेलन जैसे बड़े कार्यक्रमों के माध्यम से आपस में जोड़ा तथा कुरीतियों के उन्मूलन का दायित्व इन समूहों को सौंपा। सभी समूहों ने अपने–अपने गांव में जाकर लोगों को समझाया और परम्पराओं में परिवर्तन के लिए लोगों को तैयार किया। स्वयंसहायता समूहों द्वारा निम्न रूढ़िवादी परम्पराओं में बदलाव लाने के लिए जो प्रयास किए गए, वे इस प्रकार हैं –

मद्यपान की प्रवृत्ति में आए बदलाव

शराब पीने की प्रवृत्ति इस समुदाय में प्राचीन काल से ही विद्यमान रही है। कोई भी त्यौहार, उत्सव, विवाह बिना शराब के सम्पन्न नहीं होते थे। आज यह परम्परा समस्त आदिवासियों में तो नहीं किन्तु भीलों में जड़ता के साथ विद्यमान है। पहले यह

समुदाय शराब खरीदकर नहीं वरन क्षेत्र में पाये जाने वाले महुआ वृक्ष के फूलों से बनाता था जोकि वर्तमान शराब की अपेक्षा कम हानिकारक होती थी। धीरे–धीरे क्षेत्र से महुआ पेड़ों की कटाई तथा शराब बनाने पर लगे प्रतिबन्धों ने इस समुदाय को बाजारू शराब पीने को मजबूर किया। बाजारू शराब ने इस समुदाय को न केवल आर्थिक रूप से पंगु बना दिया है वरन शारीरिक क्षति भी पहुंचाई।

समूहों, विशेषकर महिला समूहों की सदस्यों ने मद्यपान के खिलाफ पुरजोर आवाज उठाई और यह तय किया कि समूह का कोई भी सदस्य शराब नहीं पीएगा और अपने–अपने परिवार के सदस्यों के ऊपर भी शराब पीने पर प्रतिबन्ध लगाएगा। समूह सदस्यों की इस प्रतिबद्धता के सकारात्मक परिणाम सामने आए हैं। अधिकांश परिवारों ने शराब पीना बंद कर दिया है। इसके पश्चात समूह सदस्यों ने गांवों में शराब की दुकान बंद करवाने में भी सफलता प्राप्त की। एक अनुकरणीय उदाहरण पेटलावद विकासखण्ड के सेमलिया गांव में दिखाई दिया जहां शराब पीकर झगड़ा करने वाले लोगों की सरेआम महिलाओं ने मिलकर लाठियों से पिटाई की।

वधू मूल्य की प्रथा में परिवर्तन

भीलों में वर्षों पूर्व यह परम्परा थी कि लड़की के विवाह में उसके सम्मानस्वरूप सवा रुपये से लेकर सवा इक्कीस रुपये तक वर पक्ष के परिजनों से वधू की सम्मान राशि ली जाती थी। इसे स्थानीय भाषा में **"दापा"** कहा जाता है। यह परम्परा इसलिए प्रचलित थी कि भीलों की संस्कृति में लड़की को बहुत सम्मान की निगाह से देखा जाता था। विवाह के बाद ससुराल में उसका सम्मान किया जाए इसलिए प्रतीक स्वरूप वर पक्ष के लोगों से सम्मान निधि के रूप में नाममात्र की धनराशि ली जाती थी। वर्तमान में यह परम्परा इतनी विकृत हो चुकी है कि विवाह का मामला लड़की के खरीद–फरोख्त जैसा हो गया है। सवा रुपये से बढ़कर वधू मूल्य 40 से 60 हजार रुपये तक पहुंच चुका है। पहले ही किल्लत व बदहाली से तंग भील आदिवासी इस खुशी के मौके पर दुख की गर्त में चला जाता है। इस भारी रकम की व्यवस्था करने के लिए वर पक्ष के परिवार को कर्ज लेना पड़ता है। जमीन, गहने व पशु गिरवी रखकर या इन्हें बेचकर इस धन की आपूर्ति करता है। विवाह पश्चात् ऋण चुकाने हेतु लड़का मजदूरी करता या अपने नये परिवार के साथ पलायन कर जाता है। कुल मिलाकर इस विवाह में परिवार को खुशियों की जगह तबाही और पीड़ा ज्यादा मिलती है। वधू मूल्य को लेने के पीछे भील समुदाय की मुख्यतः तीन मान्यताएं हैं – पहली, यह सुरक्षा निधि है जो लड़की को बुरे समय में काम आएगी। दूसरी मान्यता के अनुसार वर पक्ष जितना ज्यादा पैसा वधू पक्ष को देगा उस पर उतना ही विश्वास होता है कि वह लड़की को नहीं छोड़ेगा और तीसरी मान्यता है कि लड़की के पालन–पोषण में जो धनराशि खर्च हुई है, उसकी यह भरपाई है।

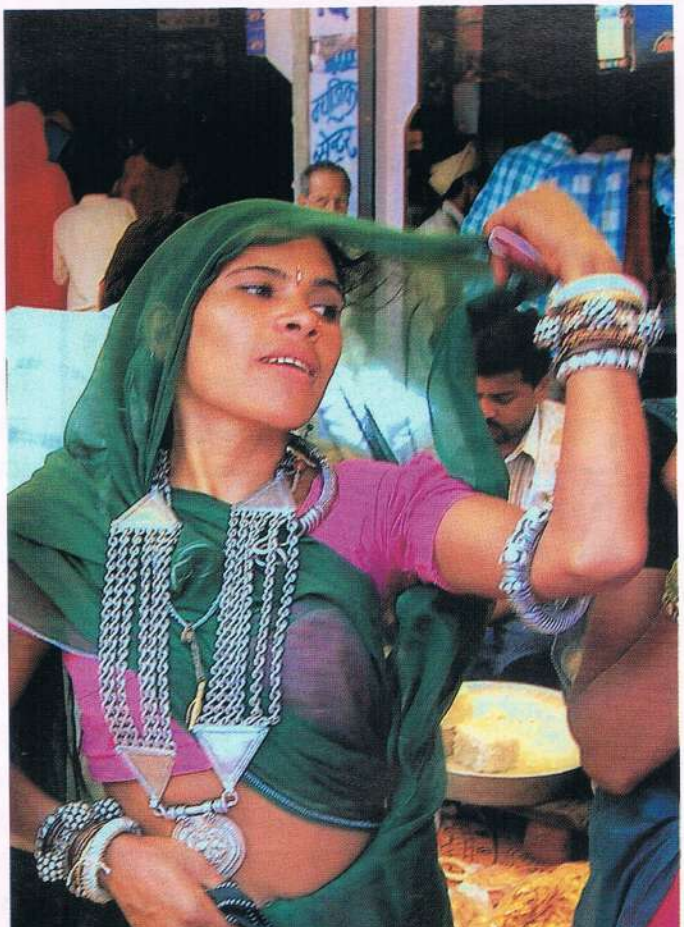

चांदी के गहनों में इठलाती भील महिला

वधू मूल्य की बढ़ती राशि व उसके दुष्प्रभावों की चर्चा सभी समूहों ने पहले व्यक्तिगत स्तर पर अपनी बैठकों में की तथा वैकल्पिक व्यवस्था की स्थापना के बारे में सोचा गया। इसके पश्चात सभी समूहों का एक सम्मेलन स्वयंसेवी संगठन 'सम्पर्क' ने आयोजित किया जिसमें सर्वसम्मति से यह तय किया गया कि अब वधू मूल्य कोई भी 5000 हजार रुपये से अधिक न तो लेगा और न ही देगा। साथ ही, वधू मूल्य लेने वाला पक्ष यह प्रयास करेगा कि वह इस राशि को पुनः गहनों के रूप में वर पक्ष को लौटा देगा। इसके अतिरिक्त यह भी तय किया गया कि सभी लोग इस सुपरम्परा का अपने रिश्तेदारों व मित्रों के मध्य प्रचार–प्रसार करेंगे।

भीलों के द्वारा इस परम्परा को अपनाने के बाद कई आशाजनक परिणाम सामने आए हैं तथा कई परिवारों ने पुरानी मान्यताओं को तोड़कर इस नई मान्यता को मानते हुए विवाह किए हैं। 'निश्चित रूप से गरीबी की मार झेल रहे भीलों के लिए यह सुधार काफी महत्वपूर्ण साबित हुआ है। इनकी आय का अधिकांश हिस्सा' जो विवाह में वधू मूल्य पर खर्च हो जाता था, वह बचा है।

जाति पंचायत की धारणा में आए बदलाव

प्राचीन समय में भील समुदाय का अपना विवाद प्रबंधन तंत्र होता था जिसके तहत गांव के लोग किसी भी तरह का विवाद होने पर उसे जाति पंचायत के माध्यम से सुलझाते थे। इस व्यवस्था में विवादित दोनों पक्ष पंच के फैसले को पूरे सम्मान के साथ स्वीकार करते थे। आवश्यकतानुसार दोषी पक्ष को दण्ड भी दिया जाता था। इस व्यवस्था में विवादों को जड़ से मिटा देने के तत्व अनिवार्य रूप से होते थे। साथ ही बिना किसी खर्च के त्वरित न्याय की प्राप्ति तथा सामाजिक सद्भाव की रक्षा भी होती थी। इस प्रकार चौपाल का न्याय (जाति पंचायत) भीलों की संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। समय के साथ-साथ गांव में बाहरी हस्तक्षेप बढ़ा, आपसी स्वार्थ पनपे जिसके परिणामस्वरूप सामाजिक न्याय की यह परम्परा क्षीण होती चली गई। लोग छोटे-मोटे या घरेलू विवादों को निपटाने के लिए पुलिस, कोर्ट आदि पर निर्भर होने लगे, जहां आपसी सहमति व समझौता व्यक्ति की सीमाओं के बाहर निकल जाता है। इसके अतिरिक्त विवाद होने पर बिचौलिए, भीलों को एक दूसरे के खिलाफ पुलिस में रिपोर्ट लिखवाने के लिए भी प्रेरित करते हैं।

> स्वयंसहायता समूहों द्वारा चौपाल के न्याय की पुनः स्थापना के प्रयासों को क्षेत्र में काफी सफलता मिली है। आज पेटलावद विकासखण्ड के लगभग प्रत्येक गांव में स्वयंसहायता समूहों की अगुवाई में 5–7 लोग ऐसे तैयार हुए हैं जो गांव के विवादों को आपसी सुलह से चौपाल पर ही सुलझाने का प्रयास करते हैं। इस गतिविधि के प्रभावस्वरूप गांवों में पुलिस का हस्तक्षेप कम हुआ है, ग्रामीणों की आय का एक बड़ा हिस्सा खर्च होने से बचा है तथा गांव में सद्भावना का वातावरण भी निर्मित हुआ है।

झगड़ों के मूल कारणों को देखा जाए तो वे अधिकांशतः महिलाओं, भूमि व शराब से संबंधित रहे हैं जिसे स्थानीय भाषा में ''लाड़ी, बाड़ी व ताड़ी'' कहा जाता है। क्षेत्र में आधे से अधिक विवाद महिलाओं को लेकर हुए हैं। वर्तमान समय में महिलाओं से संबंधित विवादों में दलालों की भूमिका बढ़ी है। दलाल वह व्यक्ति होता है जो दोनों परिवारों के बीच मध्यस्थता करता है। इसमें सबसे खराब स्थिति तब बनती है जब कोई व्यक्ति खासतौर से लड़की के परिवार वाले यह महसूस करते हैं कि वे लड़के के परिवार से कमजोर हैं और उन पर झगड़ा सुलझाने के लिए दबाव नहीं बना सकते तो वे दलाल को अपना झगड़ा सौंप देते हैं। फिर दलाल का यह काम होता है कि लड़के के परिवारवालों पर दबाव बनाये और पैसे वसूल करे। इस झगड़े में मिलने वाली राशि में दलाल का एक निश्चित हिस्सा पहले ही तय हो जाता है।

गांव में होने वाले छोटे-छोटे विवादों का निराकरण करने के लिए चौपाल के न्याय की पुनर्स्थापना के प्रयास भी इन स्वयंसहायता समूहों के द्वारा किए गए। समूह सदस्यों ने नुक्कड़ नाटकों के मंचन के माध्यम से गांव-गांव में जागरुकता अभियान चलाया और यह समझाने का प्रयास किया कि इन झगड़ों का अनुचित लाभ कौन उठाता है? आदिवासी झगड़ों में गैर-आदिवासी लोग क्यों आते हैं? साथ ही पूर्व में न्याय की क्या व्यवस्था थी और वापस उस व्यवस्था को पुनर्जीवित किस प्रकार किया जाए।

अड़जी-पड़जी व्यवस्था में आए बदलाव

अड़जी-पड़जी का शाब्दिक अर्थ होता है किसी के काम विशेषकर खेती से सम्बन्धित कार्यों में एक-दूसरे की निःशुल्क मदद करना। भील समाज में एक-दूसरे के कार्यों में मदद करने की परम्परा प्राचीन समय से ही रही है। "हलमा" भी इसी तरह की एक परम्परा है जिसमें गांव अथवा फलिये के लोग एक साथ मिलकर एक व्यक्ति के घर कार्य करते हैं। इसके बाद जिस व्यक्ति के घर हलमा करते हैं वह व्यक्ति रात को सभी के लिए भोजन व शराब की व्यवस्था करता है। किन्तु अड़जी-पड़जी हलमा का उन्नत रूप है। इन दोनों में मूल अन्तर यह है कि अड़जी-पड़जी में काम के बदले में किसी प्रकार का भोजन या शराब नहीं दी जाती वरन काम के बदले काम को कर्ज के रूप में स्वीकार किया जाता है।

अड़जी-पड़जी की वापसी के लिए स्वयंसहायता समूह के सदस्यों ने लोगों के बीच इस बात को रखा कि भील समुदाय में बचत की प्रवृत्ति न होने के कारण पास में जमा धन तो होता ही नहीं है जिस वजह से कृषि कार्य प्रभावित होता है। इस समस्या से बचने के लिए यह आवश्यक है कि समुदाय अपने श्रम की अदला-बदली करे। इस बात को लोगों ने स्वीकार किया जिसके आशाजनक परिणाम समुदाय के मध्य दिखाई देने लगे हैं। लोग बिना मजदूरी लिए एक-दूसरे के यहां काम के समय में सहयोग करने लगे हैं। कृषि में होने वाले खर्च में कमी के साथ-साथ कृषि

कार्य में नुकसान की संभावना भी कम हुई है, क्योंकि अधिकांश कार्य लोगों द्वारा आपसी सहयोग से पूर्ण किए जाने लगे हैं। महिलाओं में सामूहिक श्रम की प्रवृत्ति का विकास हुआ है। साथ ही मिलकर कार्य करने की भावना से विखण्डित समाज पुनः जुड़ाव की ओर अग्रसर हुआ है।

मृत्युभोज की परम्परा में आए बदलाव

हिन्दू धर्म में यह मान्यता है कि व्यक्ति की मृत्यु के 12 दिनों बाद उसकी आत्मा की शान्ति के लिए मृत्युभोज का आयोजन किया जाता है जिसमें समाज के सभी लोग आते हैं। अधिकांश भील समाज भी हिन्दू धर्म को मानने वाला है और मृत्युभोज के मामले में भी वे हिन्दू धर्म की इस परम्परा को मानते हैं। प्रारंभ में भील समाज में इस परम्परा का निर्वाह आपसी सहयोग से पूर्ण किया जाता था। प्रत्येक भील अपनी सामर्थ्य और क्षमता के अनुसार अनाज व कुछ पैसे मृतक के परिवार को सहयोग स्वरूप देता था तथा इससे सादा पारम्परिक भोजन बनता था किन्तु समय के साथ आपसी सहयोग से पूर्ण की जाने वाली यह परम्परा इतनी विकृत हो गई कि इसके निर्वहन में भीलों को 20 से 25 हजार रुपये तक खर्च करना पड़ता है। अधिक आय न होने के कारण इनके पास जमापूंजी तो होती ही नहीं और सीधे–सीधे इस खर्च की पूर्ति उच्च ब्याज दर पर साहूकारों से उधार लेकर की जाती है। पारिवारिक अर्थव्यवस्था पर इसका असर आने वाले पांच–सात वर्षों तक बना रहता है।

स्वयंसहायता समूहों ने चौपाल, बैठकों, नुक्कड़ नाटकों, डाक्यूमेंट्री फिल्मों के माध्यम से इन मुद्दे को उठाया कि आमतौर पर आदिवासी समुदाय के पास नगद पैसे नहीं होते और यदि वह मृत्युभोज के लिए 20 से 25 हजार रुपये साहूकार से उधार लेता है तो उसकी आय का अधिकांश हिस्सा ब्याज की पूर्ति में ही चला जाता है। इस चक्र को तभी तोड़ा जा सकता है जब लोग आपसी सहयोग के रिश्तों को अपनाने को तैयार हो।

मृत्युभोज को बंद करने की गतिविधि के अनुकूल परिणाम सामने आए हैं। कई गांवों में लोगों ने आगे बढ़कर खर्चीले मृत्युभोज बंद कर सहयोगी नुक्ता करने का निर्णय लिया है जिसके तहत मृतक परिवार को गांव अथवा फलियों के सभी लोगों द्वारा 5 किलो अनाज व 10 से 50 रुपये तक नगदी देना तय किया। इस अनाज व राशि से सामूहिक नुक्ता पूर्ण किया जाता है। इस परम्परा को अपनाने से एक बड़ा प्रभाव यह देखने को मिला पहले जहां मृतक परिवार आर्थिक संकट की हालत में होता था व ऊपर से उस गांव को भोजन कराने का भी दबाव रहता था, वही सहयोगी नुक्ता के माध्यम से न केवल वह आर्थिक भार से बचा वरन संकट के समय गांव के लोगों के सहयोग से उसके घर में एक–दो महीने का अनाज भी एकत्र हो जाता है।

स्वयंसहायता समूहों की अन्य गतिविधियां

स्वयंसहायता समूहों के प्रयासों से क्षेत्र में रूढ़िवादी प्रथाओं के साथ–साथ और भी कई बदलाव दिखाई देते हैं। पूर्व में ये लोग छोटी–छोटी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए अधिक ब्याज पर साहूकारों से ऋण लेते थे किन्तु समूहों के गठन से कम ब्याज पर तुरन्त ऋण मिलने लगा है जिससे साहूकारों पर निर्भरता कम हुई है। समूह से ऋण लेकर इन लोगों ने किराना दुकान, आटा चक्की, थ्रेशर मशीन, डीजल पम्प जैसे स्वरोजगार के साधन जुटाकर आजीविका के साधनों में वृद्धि की है। इसके अतिरिक्त महिला स्वयंसहायता समूहों की बदौलत महिलाओं में एकजुटता एवं नेतृत्व क्षमता का विकास हुआ है जो कहीं न कहीं महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा दे रहा है। कुल मिलाकर इन स्वयंसहायता समूहों के द्वारा आदिवासी समुदाय को सांगठनिक बल मिलता है तथा विकास कार्यक्रमों के साथ इनका जुड़ाव सुनिश्चित होता है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि स्वयंसेवी संगठन और स्वयंसहायता समूहों की गतिविधियों से भील समुदाय में बदलाव आए हैं, अच्छी परम्पराओं के विकसित होने के साथ–साथ आजीविका भी सुदृढ़ हुई है। किन्तु यह कहना गलत होगा कि इस प्रकार के बदलाव सभी गांवों या सम्पूर्ण जिले में आ चुके हैं। किन्तु फिर भी आदिवासी समाज में इस अनावश्यक खर्च के प्रति संवेदनशीलता आई है। लोग इस बात को स्वीकारने लगे हैं कि कुरीतियां उनके विकास में बाधक हैं। यह अपने आप में एक बहुत बड़ा बदलाव है।

स्वयंसेवी संगठन और स्वयंसहायता समूहों की कर्मठता से उपजी यह सफलता एवं खुशहाली की कहानी झाबुआ जिले के एक विकासखण्ड की है जिसने भीलों की वर्षों पुरानी परम्पराओं को पुनर्जीवित कर आत्मसम्मान की भावना जाग्रत की है। इस तरह के प्रयासों की आवश्यकता राजस्थान व गुजरात राज्यों में भी है क्योंकि वहां पर भी भील बड़ी संख्या में रहते हैं। यदि सरकार, गैर–सरकारी संगठन, सामुदायिक संगठन और स्वयंसहायता समूह मिलकर इस तरह के कार्यों को अंजाम देते हैं तो जनजातीय समुदाय की तस्वीर काफी बदल सकती है।

(लेखक इन्दिरा गांधी राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय अमरकंटक (मध्य प्रदेश) में राजनीति विज्ञान के व्याख्याता हैं।)

ई–मेल : uday20@rediffmail.com

डगर समूह ने दिखाई साक्षरता की राह

नवीन कुमार

डगर समूह ने काको प्रखंड में साक्षरता की रोशनी फैला दी है। थोड़े से प्रयास से महिलाओं के विचारों में इतना बड़ा परिवर्तन आ गया है और उनमें साक्षरता के प्रति रुझान पैदा हो गया। एक छोटी-सी शुरुआत ने एक बड़े स्वप्न को यथार्थ में बदल दिया। आज उस क्षेत्र में समूह को पढ़ाई का भी एक जरिया माना जाने लगा है। समूह से इतर या किसी कारण से समूह से चाहते हुए भी न जुड़ पाने वाली महिलाएं भी समूह की बैठकों में आकर खुद को साक्षर बनाने को कहती हैं। दो-तीन महीनों के अंदर 90 प्रतिशत से अधिक स्वयंसहायता समूहों की आधी से अधिक महिलाएं साक्षर हो चुकी हैं। किसी-किसी समूह की साक्षरता शत-प्रतिशत हो चुकी है।

बिहार का जहानाबाद जिला देश के नक्सलवाद प्रभावित क्षेत्रों में एक विशेष स्थान रखता है। दूसरे प्रदेशों की कौन कहे, अपने प्रदेश वाले का दिल भी इसका नाम सुनकर धड़क उठता है। इसके अंदरूनी इलाकों में सरकारी योजनाओं का प्रचार–प्रसार करना तो दूर कोई सरकारी कर्मचारी इधर के दौरे तक से हिचकता था।

परन्तु अब परिस्थितियों ने करवट ली है। अब तो पुरुषों की बात छोड़िए, महिलाएं भी परिवर्तन के लिए लगन से प्रयास करती दिख रही हैं। खासकर स्वयंसहायता समूहों की योजना 'काको' प्रखंड में बदलाव की बयार लाने में बखूबी अपना योगदान दे रही है। समूह के माध्यम से महिलाओं में साक्षरता लाने के काम को सफलतापूर्वक अंजाम दिया जा रहा है।

अभ्यास ही तो करना है, कॉपी में लिखें या हाथ पर

वे कहते हैं कि जितना समय ये सब पढ़ने–लिखने में लगाएंगी उतनी देर में जानवरों को खिलाने के लिए दो टोकरी घास ज्यादा काट लाएंगी, घर के दूसरे काम खत्म कर लेंगी। बुढ़ापे में पढ़कर उन्हें कलेक्टर तो बनना नहीं, फिर समय बर्बाद करने से क्या फायदा।

हालांकि नयी पीढ़ी के कुछ नौजवानों में जागृति दिखती है। वे अपने घर की महिलाओं को पढ़ाना तो चाहते हैं पर महिलाओं में भी उत्साह की कमी रहती है। नतीजा ढाक के तीन पात। जैसे मुड़ेरा के कमलेश कुमार अपनी पत्नी को रोज पढ़ाने बैठते ताकि कम से कम वह अपना नाम तो लिख सकें। परंतु वह सीख नहीं पा रही है। एक दिन गुस्से में कमलेश ने उसका हाथ मरोड़ दिया। तुनक कर पत्नी ने भी कलम फेंक दी और फिर कभी पढ़ने का नाम ही नहीं लेती। कुछ ऐसा ही किशोरी और संजय के साथ भी हुआ।

ऐसी विषम परिस्थितियों में कुछ अलग तरकीबें निकालनी जरूरी थी। समूह बनाने वाली स्वयंसेवी संस्था 'डगर' के कार्यकर्ताओं ने महिलाओं में अंतःप्रेरणा जगाना शुरू किया। उन्हें कहा कि किसी कागज पर अंगूठे का निशान लगाने के लिए भरे समाज में किसी गैर से अपना हाथ पकड़वाना उन्हें अच्छा लगता है? लज्जा

आमतौर पर समूह निर्माण के समय बीपीएल परिवारों की 80 से 90 प्रतिशत महिलाएं निरक्षर होती हैं। पढ़ाई–लिखाई के प्रति स्वाभाविक अरुचि देखने को मिलती है, क्योंकि प्रारंभ से ही उन्हें वैसा माहौल मिला होता है। कोई पढ़ने–लिखने की बात करे या उसके फायदे गिनाए तो नकारात्मक बातें ही सुनने को मिलती हैं। नवादा गांव की 65 वर्षीय सीता देवी कहती हैं 'माय–बाप न पढ़बई त अब हमनी मरे के उमर में का पढ़बई'? (यानी कि मां–बाप ने नहीं पढ़ाया तो अब मरने की उम्र में क्या पढ़ाई होगी?)। मुड़ेरा की लालपरी देवी का कहना है कि हमारे बाल–बच्चे सब पढ़ ही रहे हैं, हम पढ़कर क्या करेंगी? देवराज बिगहा में सरस्वती स्वयंसहायता समूह की 60 वर्षीय अध्यक्षा लालती देवी को अध्यक्ष पद से हटना मंजूर था, परन्तु बुढ़ापे में पढ़ने की आफत वह मोल नहीं लेना चाहती थी। ग्राम मुरासा की रामरति देवी के शब्दों में 'मिट्टी के कोठी पारेला कहब त बढ़िया–बढ़िया कोठी पार देबव, बाकी इ पढ़े–लिखे वाला काम हमरा से न होवत'। (यानी मिट्टी का कोई भी काम बखूबी कर देंगी, पर पढ़ाई बड़ी मुश्किल है)। बसंतपुर हड़हर की 64 वर्षीय अलोधनी देवी को अंगूठे का निशान देने में आसानी लगती थी। झटपट काम हो जाता है। नाम लिखने में बड़ा झंझट लगता है उन्हें।

घर के पुरुष सदस्य भी महिलाओं की पढ़ाई–लिखाई पर फब्तियां कसते हैं। महिलाओं का कलम पकड़ना उन्हें तनिक भी नहीं सुहाता।

अपना नाम लिखती महिला

तो वहां आनी चाहिए। पढ़ने में कैसी लज्जा? जब अपने बच्चों को पढ़ा सकती हैं, यानी आपको पढ़ाई का महत्व मालूम है फिर स्वयं क्यों इसे महसूस नहीं करती।

उन महिलाओं के बच्चों को समझाया कि जिस मां ने उन्हें जन्म दिया है, वह अनपढ़ रहे क्या उन्हें अच्छा लगता है? आप पढ़े–लिखे हैं तो फर्ज है कि उन्हें भी पढ़ाइए। यदि हर घर के बच्चे सिर्फ अपनी मां और दादी को भी शिक्षित करते हैं तो पूरे गांव को साक्षर करना दुःस्वप्न नहीं रह जाएगा। साक्षरता की प्रक्रिया को भी सरल बनाने को कहा। बड़ी उम्र की महिलाओं को साक्षर करना तब कठिन हो जाता है जब सिखाने वाला अपेक्षा करता है कि महिला हूबहू उसकी तरह ही पढ़े–लिखे। इससे बचने पर अपेक्षाकृत अधिक सफलता पायी जा सकती है। नयी पीढ़ी के नौजवानों में यह प्रेरणा जगायी गई कि वे कम से कम दो महिलाओं को सिखाने की जिम्मेदारी लें।

समूह की बैठक पंजी पर हस्ताक्षर करती रामरति

इन सबका बहुत ही सकारात्मक प्रभाव पड़ा। सबने अपने–अपने हिस्से की जिम्मेवारियों को बखूबी निभाया और आज परिदृश्य बहुत हद तक बदल चुका है। दो–तीन महीनों के अंदर 90 प्रतिशत से अधिक स्वयंसहायता समूहों की आधी से अधिक महिलाएं साक्षर हो चुकी हैं। किसी–किसी समूह की साक्षरता शत–प्रतिशत हो चुकी है।

कल तक कलम पकड़ने से लजाने वाली महिलाओं से अब बात की जाए तो उनका जवाब बदल चुका है। अलोधनी देवी अपना नाम लिखने के बाद खुश होकर कार्यकर्ता को मिठाई खाने के पैसे देने लगीं। सीता देवी ने आशीर्वाद दिया 'बाबू हमरो उमर ले के तू जी (तुम हमारी उम्र लेकर जीयो)। रामरति देवी कहती हैं कि ऐसा कौन काम है जो आदमी चाह ले तो नहीं कर सकता। अगर मर्द पढ़ सकते हैं तो हम औरतें भी। अब हमें मूर्ख नहीं बना सकते ये मर्द।

फुर्सत के क्षणों में क्यों न कुछ पढ़ा–लिखा जाए

डगर समूह ने काको प्रखंड में साक्षरता की रोशनी फैला दी है। थोड़े से प्रयास से महिलाओं के विचारों में इतना बड़ा परिवर्तन आ गया। उनमें साक्षरता के प्रति रुझान पैदा हो गया। एक छोटी–सी शुरुआत ने एक बड़े स्वप्न को यथार्थ में बदल दिया। आज उस क्षेत्र में समूह को पढ़ाई का भी एक जरिया माना जाने लगा है। समूह से इतर या किसी कारण से समूह से चाहते हुए भी न जुड़ पाने वाली महिलाएं भी समूह की बैठकों में आकर खुद को साक्षर बनाने को कहती हैं। गांव वाले भी समूह की महिलाओं को अब मास्टरनी, मेडम आदि विशेषणों से संबोधित करने लगे हैं। कल तक दबी–कुचली और सिर्फ घर के कामों में उलझी रहने वाली महिलाओं में भी अब आत्मगौरव की भावना जागने लगी है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल : nawinutpal@yahoo.com

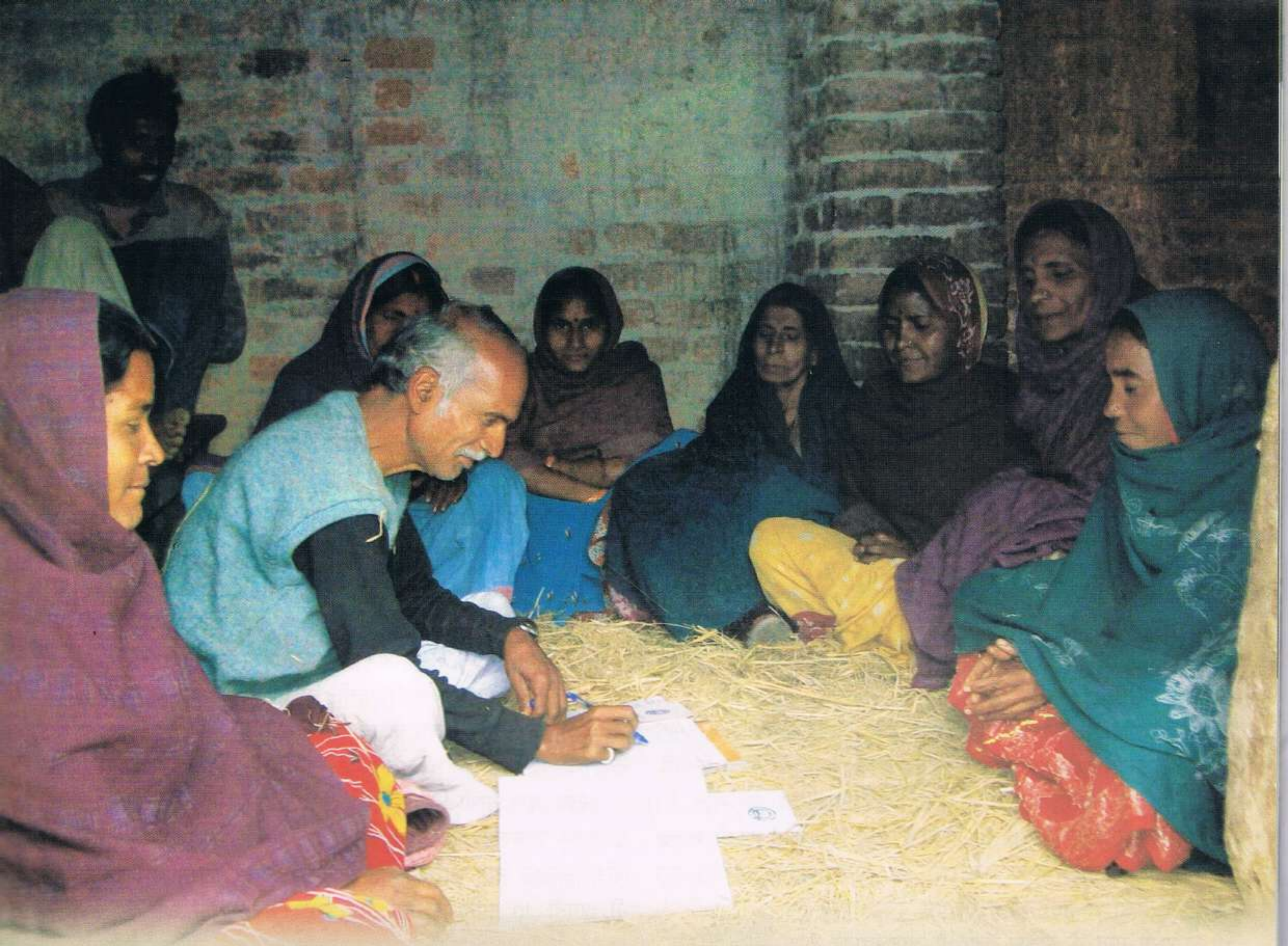

फिज़ां बदली कमल और गुलाब समूहों ने

उत्पल कांत

आज कमल और गुलाब दोनों समूह गांव ही नहीं, आसपास के इलाके में भी मिसाल बन चुके हैं। आतंक और नक्सलवाद के लिए कुख्यात इलाकों में इस तरह सफलतापूर्वक स्वयंसहायता समूहों का संचालन अपने आप में बड़ी बात है। लोगों ने अपनी जागरुकता से समूह बनाया और समूह निर्माण के पीछे के सरकारी सपने को बखूबी साकार कर रहे हैं। इस तरह इन गरीब परिवारों को तो समूह ही अपना भरोसेमंद सहारा लगता है। अलग-अलग परिवारों के इसके सदस्य आज आपस में एक परिवार से भी ज्यादा मेलजोल से रहते हैं। यदा-कदा मनमुटाव की बात उठती भी है तो लालबहादुर एक अभिभावक की तरह सबको समझाते हुए यथोचित समाधान निकालते हैं।

'जहानाबाद, यह नाम सुनते ही आज भी लोग भयमिश्रित आश्चर्य से भर जाते हैं। जहानाबाद की एक अलग ही छवि लोगों के मन में बसी है। जातीय सेनाएं, नरसंहार, जेलब्रेक यही सब ध्यान में आता है। इससे इतर कुछ होगा, ऐसी कल्पना तक नहीं की जा सकती। परंतु कीचड़ में भी कमल खिलता है।

यह बात सच कर दिखाई है धनौती गांव के 'कमल स्वयंसहायता समूह' ने और यह कमल अकेला ही नहीं खिला, उसने अपने साथ

लाल बहादुर बच्चों के साथ अपने पुस्तकालय में

एक गुलाब भी खिलाया यानी 'गुलाब स्वयंसहायता समूह'। धनौती, जहानाबाद सदर प्रखण्ड के मान्देबिगहा पंचायत का गांव है। जहानाबाद शहर से दूरी 18 किमी.। आज तक कोई पक्की सड़क नहीं पहुंची वहां। कच्चे रास्ते भी अब जाकर बनने लगे हैं। उस कच्चे रास्ते से वहां जाना एकदम दुरुह कार्य है।

उसी गांव के दक्षिण तरफ है लालबहादुर शास्त्री जी का घर। यह दम्पत्ति निःसंतान है। अपना गम कम करने हेतु शास्त्री जी ने घर के बगल में अपने दालान में रामेश्वर ठाकुर सार्वजनिक पुस्तकालय बना दिया। आसपास के लोगों की बैठक वहां लगती थी। शास्त्री जी स्वयं साक्षर हैं सो उन्होंने इस कला को बांटने में भी संकोच नहीं किया। आसपास के बच्चों को पढ़ाते। शाम को प्रतिदिन पुस्तकालय में रेडियो बजता जिसे सुनने के लिए पूरा मुहल्ला इकट्ठा होता।

सन् 2007 का अगस्त महीना था। आकाशवाणी पर स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत गठित होने वाले स्वयंसहायता समूहों हेतु प्रेरक विज्ञापन लगभग हर रोज आ रहे थे। सुनने वालों में शास्त्री जी के साथ–साथ साहा देवी और बेसलाल सिंह भी थे। समूह की बात उन्हें आकर्षित कर रही थी। बस, आपस में विचार–विमर्श शुरू हो गया कि क्या हम वैसा समूह नहीं बना सकते हैं!

योजना तो बुरी नहीं थी। परन्तु सब कुछ इतना आसान कहां था। खासकर उस समय आसपास के इलाकों में भी समूह की कोई बात किसी ने नहीं सुनी थी। अधिकतर गांव वाले तो निरक्षर थे। ऊपर से नक्सली और जातीय सेनाओं के वर्चस्व की जंग यहां भी थी। सलारपुर गांव धनौती के बगल में है। पुलिस रिपोर्टों के अनुसार सलारपुर में ही जहानाबाद जेलब्रेक की योजना बनी थी। आज से दो साल पहले दिन के उजाले में भी आम आदमी उधर जाने की सोचता तक नहीं था। समझ सकते हैं माहौल कैसा होगा?

परन्तु शास्त्री जी और बेसलाल सिंह अपनी योजना को मूर्त रूप देने में जुट गए। उन्होंने लोगों से बात करनी शुरू की। ऊंची जाति के लोगों को इसमें शास्त्री जी का स्वार्थ नजर आया। उन्होंने यह कहकर भड़काना शुरू किया कि शास्त्रीजी लोगों को बहला रहे हैं, झांसा देकर गरीबों, अनपढ़ों को मूर्ख बना रहे हैं। दो–चार लोग जो साथ देने को तैयार हुए थे, उन्हें दाल में काला लगने लगा और वे पिण्ड छुड़ाकर अलग हो गये। पर शास्त्री जी ने हार नहीं मानी। वे लगे रहे। पुस्तकालय में शाम को आने वाले लोगों से बात करते रहे। रेडियो का विज्ञापन उन्हें भी सुनवाते। कुछ लोगों को बातें समझ में आने लगी।

अंततः दस साथी मिल ही गये। यदुनन्दन प्रसाद की अध्यक्षता में कमल स्वयंसहायता समूह बन गया। शास्त्री जी कोषाध्यक्ष बने और बेसलाल सिंह सचिव। शास्त्री जी की मदद से साहा देवी को भी अपनी 10 सखियां मिल गई समूह बनाने को और उन्होंने गुलाब स्वयंसहायता समूह बनाया। परन्तु साहा देवी को इसकी कीमत भी चुकानी पड़ी। चूंकि उनका कोई भाई न था इसलिए शादी के बाद भी वे मां की देखभाल करने हेतु सपरिवार मायके में ही रहती थी। परन्तु उनकी मां को समूह में आना–जाना, बैठक करना नागवार गुजरा। उन्होंने पहले तो खूब झगड़ा किया, बाद में संबंध विच्छेद कर लिया। सगी मां–बेटी में दो साल तक बातचीत तक नहीं हुई। पर साहा देवी समूह में बतौर अध्यक्ष बनी रहीं। सबुजा देवी इस गुलाब समूह की सचिव बनीं और कोषाध्यक्ष चुनी गई कांति देवी।

इसके बाद सबने अपने स्तर से एक स्वयंसेवी संस्था से सम्पर्क करके समूह की बाकी औपचारिकताएं पूरी कराई। अक्टूबर 2007 में दोनों समूहों का बचत खाता मध्य बिहार ग्रामीण बैंक, जहानाबाद में खुल गया। दोनों ही समूहों में सभी सदस्य 50–50 रुपये प्रति माह बचतराशि जमा करने लगे। शास्त्रीजी के पुस्तकालय में ही महीने में दो बार समूहों की बैठक होती। स्वयंसेबी संस्था ने आगे कोई सुध नहीं ली पर शास्त्रीजी अपने स्तर से जानकारी लेकर दोनों समूह संचालित करते रहे।

दोनों समूहों के सभी निरक्षर सदस्यों को उन्होंने पढ़ना–लिखना सिखाया। साहा देवी उन दिनों को याद करते हुए कहती हैं– "गुरुजी (शास्त्री जी को इसी नाम से पुकारती है) एकदम मास्टर की तरह पढ़ाते थे। एक–एक अक्षर सिखाते थे। नहीं सीखो तो मारते भी थे, बिल्कुल एक पिता की तरह।" सचमुच शास्त्री जी ने साहा देवी, उनके पति और बच्चे सबको सहारा और मार्गदर्शन दिया। कांति देवी, सुबाजा देवी, यदुनन्दन प्रसाद, सुरेश महतो, बच्चन महतो, ये सब अपने पढ़ने का श्रेय शास्त्री जी और समूह को देते हैं।

इस तरह कमल और गुलाब खिल गए लेकिन स्वयंसेवी संस्था की उदासीनता और सरकारी कर्मचारियों के लालची रवैये से इनको आज तक बैंक से वित्तपोषण नहीं हुआ, किसी प्रकार की निधि नहीं मिली। परन्तु इससे इतर भी दोनों समूहों की आभा और सुन्दरता में इजाफा ही होता रहा।

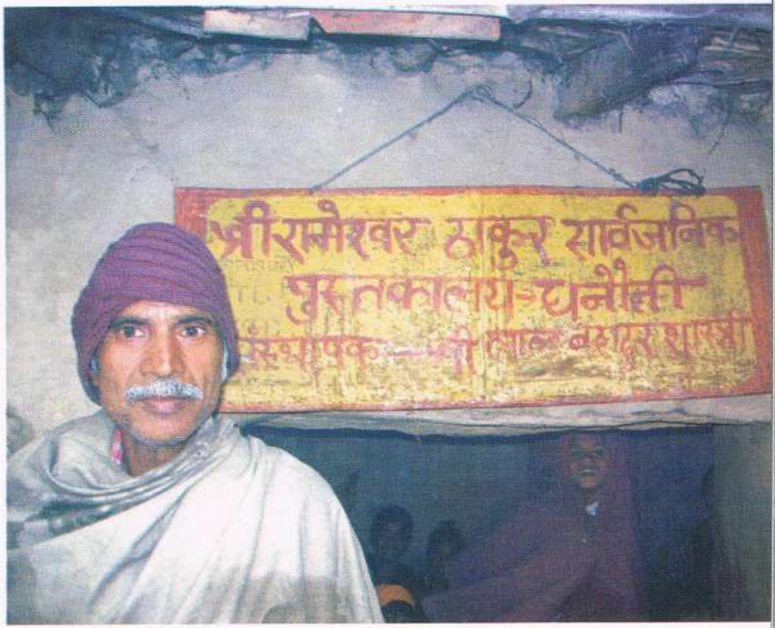

सरकार या बैंक से मदद न मिली पर इसके सदस्य आपस में परिवार की तरह बने हुए हैं। सुख–दुःख के सच्चे साथी। अपने सदस्यों की छोटी–छोटी जरूरतें पूरी करने के साथ आर्थिक रूप से स्वावलंबी भी बना रहे हैं। समूह के लोग दूसरे की मदद के मोहताज नहीं। जरूरत के समय इसके सदस्यों को दूसरों के सामने हाथ पसारने नहीं जाना पड़ता। न इन्हें साहूकारों के रहमोकरम की अपेक्षा रहती है, न ज्यादा सूद देना पड़ता है। अपने समूहों की जमा की गयी बचत से ही कर्ज मिल जाता है।

यदुनंदन प्रसाद का बेटा परिवार की आर्थिक मजबूती हेतु व्यापार करना चाहता था। पिता ने समूह की सहायता लेकर उसका हौंसला बढ़ाया। अगस्त 2008 में समूह की बचतनिधि से 3000 रुपये का कर्ज लेकर पटना में उसकी दुकानदारी जमा दी। दुकान अच्छी चल रही है। समूह का 2 प्रतिशत मासिक ब्याज और मूलधन दोनों समय से लौट रहा है।

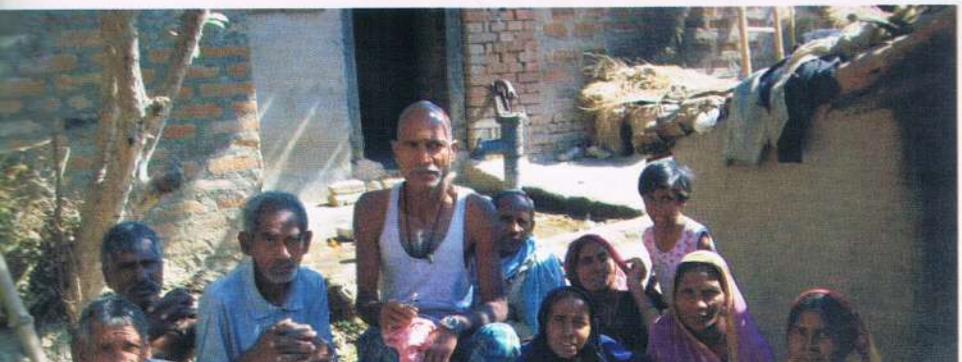

दोनों समूह के सदस्य एक साथ

सितंबर 2008 में बेसलाल सिंह के पिता का निधन हो गया। दूसरों के खेतों में मेहनत–मजदूरी करके पेट पालने वाले बेसलाल सिंह को भी सामाजिक रीति–रिवाज तो निभाने ही थे। अब श्राद्धकर्म में खर्च तो होता ही है। उन्होंने समूह से 2000 रुपये कर्ज लिया। मृतात्मा की शांति हेतु तय विधि–विधान संपन्न कराये ही, पर खुद भी कर्ज के जाल में फंसकर अशांत नहीं हुए। धीरे–धीरे करके समूह का पैसा लौटाते जा रहे हैं।

गत 7 दिसंबर की बात है। कमल समूह के सदस्य सुरेश महतो की पत्नी जाड़े की भोर में खेत में मजदूरी करने गयी• थी। अचानक ठंड लगी और वो खेत में गिर पड़ी। उनका कंठ मानो बंद हो गया था। गांव के लोगों ने भागदौड़ कर

कमल समूह की सदस्य

मनमुटाव की बात उठती भी है तो लालबहादुर एक अभिभावक की तरह सबको समझाते हुए यथोचित समाधान निकालते हैं।

आज कमल और गुलाब दोनों समूह गांव ही नहीं, आसपास के इलाके की भी मिसाल बन चुके हैं। आतंक और नक्सलवाद के लिए कुख्यात इलाकों में इस तरह सफलतापूर्वक स्वयंसहायता समूहों का संचालन अपने आप में बड़ी बात है। लोगों ने अपनी जागरुकता से समूह बनाया और समूह निर्माण के पीछे के सरकारी सपने को बखूबी साकार कर रहे हैं।

कमल और गुलाब की खुशबू से प्रभावित होकर इस वर्ष जनवरी माह के बाद से अब तक शंकर, पार्वती, सीता और दुर्गा नाम के चार अन्य स्वयंसहायता समूहों का निर्माण हो चुका है। पड़ोस के सलारपुर गांव में भी नौ समूहों का निर्माण हुआ हैं। लालबहादुर, बेसलाल और साहा देवी की खुशी भी अब देखते बनती है। उन्हें लगता है कि उनके कामों को अब समाज में मान्यता मिलने लगी है। लोग उन्हें अछूत की तरह नहीं समझते।

उन्हें अस्पताल पहुंचाया। समय पर उचित इलाज से वे ठीक हो गयी। पर डॉक्टर की फीस और दवाओं का खर्च कुछ ज्यादा हो गया। सुरेश महतो ने इस विपत्ति में गुलाब समूह से 3000 रुपये कर्ज लिए। इलाज के बाद बचे 2000 रुपये दो हफ्ते के अंदर लौटा दिए। समूह ने कोई सूद नहीं लिया। पहले से ही नियम था कि 15 दिन के भीतर कर्ज लौटने वाले से सूद नहीं लिया जाएगा। अब उनकी पत्नी बिल्कुल स्वस्थ हैं। वे दोनों समूह का गुणगान करते नहीं थकते।

कमल समूह के सदस्य रामवचन महतो की बेटी की शादी मई में है। बेटी की शादी जरा बढ़िया ढंग से हो, हर मां–बाप की यह चाहत होती है। कोई बाप अपनी तरफ से कमी नहीं रखना चाहता। भले उसे कर्ज भी लेना पड़ जाए। गरीबी रेखा से नीचे बसने वाले रामवचन ने भी कर्ज तो लिया, वे भी पूरे 8000 रुपये का। पर उन्हें ज्यादा फिक्र नहीं। उन्हें इस बात की चिंता नहीं कि कर्ज लौटाने में ज्यों–ज्यों देर होगी उसका ब्याज सुरसा के मुंह की तरह बढ़ता जाएगा। ऐसा क्यों? क्योंकि उन्होंने यह कर्ज दोनों समूहों से मिलाकर लिया है, यानी की मात्र 2 प्रतिशत ब्याज दर। बाहर किसी गांव वाले से कर्ज लिया होता तो कम से कम 10 प्रतिशत की दर से ब्याज देना पड़ता ऊपर से रोज तगादा होने का भय बना रहता।

इस तरह इन गरीब परिवारों को तो समूह ही अपना भरोसेमंद सहारा लगता हैं। अलग–अलग परिवारों के इसके सदस्य आज आपस में एक परिवार से भी ज्यादा मेलजोल से रहते हैं। यदा–कदा

अंततः कहा जा सकता है कि स्वयंसहायता समूहों के सहारे समाज से कटे वर्गों को भी मुख्यधारा में लाया जा सकता है। दो साल पहले इस इलाके के बच्चे भी बस मार–काट, बदला –प्रतिशोध, गोली–बंदूक यही सब जानते थे। इस गांव में अब भी कितने ही परिवार हैं जिनके पुरुष सदस्य उस बर्बरता का शिकार होकर अपने परिजनों को रोता–बिलखता छोड़कर इस दुनिया को अलविदा कह चुके हैं। हाल ही में बने पार्वती समूह की कोषाध्यक्ष किरण देवी उन्हीं में शामिल हैं। उनकी चार बेटियां और एक बेटा उस दहशत भरे माहौल में अपने पिता को खो चुकी हैं। बेटियां विवाह लायक हो चुकी हैं। बेचारी किरण को अब अकेले ही सारी जिम्मेदारियां पूरी करनी हैं। समूह की योजना उन्हें भी आशा की एक किरण दिखाती है। ऐसी ही कई दास्ताने वहां भरी पड़ी हैं। गुलाब और कमल स्वयंसहायता समूहों ने आसपास के लोगों को नई राह दिखा दी है। उस इलाके में अब स्वयंसहायता समूहों का कारवां बनता जा रहा है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।
ई–मेल : utpalnawin@gmail.com

महिलाओं को एकजुट करते स्वयंसहायता समूह

डा. सुखपाल श्रीवास्तव

स्वयंसहायता समूह के पीछे मान्यता यह है कि बिखरे हुए लोगों को तो उत्पीड़ित व शोषित किया जा सकता है लेकिन यदि उन्हें संगठित किया जाए तो वे बड़ी ताकत बन जाते हैं। ग्रामीण भारत में महिला स्वयंसहायता समूहों ने लाखों अशिक्षित गरीब तबके की महिलाओं को न केवल घर की चौखट के बंधन से मुक्त करके बाहर निकाला है बल्कि उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने में समर्थ बनाया है। इसके साथ-साथ उन्हें एक सामूहिक आवाज भी दी है। महिला स्वयंसहायता समूह 'तंगहाली व गरीबी से जूझती महिलाओं के लिए नवजीवन का संदेश लेकर आए हैं। स्वयंसहायता समूह से जुड़कर महिलाएं एक-दूसरे की मदद करके जीवन की चुनौतियों का समाधान ढूढ़ने में समर्थ हुई हैं।

स्वयंसहायता समूह की अवधारणा 'संगठन में शक्ति' पर आधारित है। तिनकों से बनी रस्सी जिस प्रकार शक्तिशाली गजराज को बांध सकती है, वैसे ही आर्थिक रूप से कमजोर लोग भी मिलकर 'गरीबी के दुष्चक्र' को तोड़ सकते हैं। स्वयंसहायता समूह मुख्य रूप से गरीबी में जीवनयापन कर रहे लोगों के जीवन स्तर के उन्नयन के लिए निर्मित किया जाता है। स्वयं सहायता समूह के पीछे मान्यता यह है कि बिखरे हुए लोगों को तो उत्पीड़ित व शोषित किया जा सकता है लेकिन यदि उन्हें संगठित किया जाए तो वे बड़ी ताकत बन जाते हैं। समूह के सदस्य मिलकर एक ऐसी ताकत का निर्माण करते हैं, जिससे वे स्थानीय शोषणकर्ताओं, साहूकारों, सेठों, बाहुबलियों आदि के अत्याचारों का जमकर विरोध कर सकते हैं और उन पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। स्वयं

सहायता समूह इस बात में विश्वास करता है कि लोग आपस में मिलजुलकर अपनी रोजमर्रा के जीवन से जुड़ी समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक कदम उठा सकते हैं। वे अपने कामों का स्वयं उचित प्राथमिकता निर्धारण करने व उससे जुड़े निर्णय लेने में समर्थ हैं। उनके पास जीवन से जुड़े अनेक तरह के ज्ञान व अपार अनुभव है, जिनको वे व्यवस्थित तरीके से इस्तेमाल करें तो उनके जीवन से बदहाली खत्म हो सकती है। समूह के सदस्यों को थोड़े परामर्श व प्रेरणादायक नेतृत्व की जरूरत होती है।

ग्रामीण भारत में महिला स्वयंसहायता समूहों ने हजारों–लाखों अशिक्षित गरीब तबके की महिलाओं को न केवल घर की चौखट के बंधन से मुक्त करके बाहर निकाला है बल्कि उन्हें महत्वपूर्ण आर्थिक स्वतन्त्रता प्राप्त करने में समर्थ बनाया है। इसके साथ–साथ उन्हें एक सामूहिक आवाज भी दी है। भारत में स्वयंसहायता समूहों की शुरुआत व विकास कुछ स्वयंसेवी संगठनों ने गरीब महिलाओं को संगठित करके आय संवर्द्धन गतिविधियों के संचालन के लिए 1980 के दशक के अन्त में की। 1990 के दशक की शुरुआत में राष्ट्रीय कृषि व ग्रामीण विकास बैंक (नाबार्ड) की पहल व विशेष रुचि लेने से स्वयंसहायता समूह देश भर में फैल गए। अब तो सभी सरकारी व गैर सरकारी बैंक व आर्थिक व सामाजिक संगठन इसकी महत्ता को स्वीकार कर इसके विकास को प्रोत्साहित कर रहे हैं। पीढ़ी–दर–पीढ़ी गरीबी का दंश झेल रहे परिवारों को गरीबी से निजात दिलाने के लिए स्वयंसहायता समूह एक नयी आशा–किरण लेकर आया है। 'गरीबी हटाओ' के नारे तो कई दशकों से लगते रहे हैं लेकिन गरीबी खत्म होने की जगह अब तक गरीब ही तबाह होते रहे हैं। अब स्वयंसहायता समूह गरीबी को खत्म करने के सपने को हकीकत में बदलने में सक्षम साबित हो रहे हैं। स्वयंसहायता समूह समाज कार्य के इस मूल सिद्धान्त पर आधारित हैं कि किसी भी व्यक्ति की सहायता इस प्रकार से करें कि वह अपनी सहायता स्वयं करने में सक्षम हो जाए। स्वयंसहायता समूह के माध्यम से महिला सदस्यों को आत्मनिर्भर बनाने की कोशिश की जाती है। इसके द्वारा सदस्य महिलाएं आपस में मिलजुलकर एक–दूसरे की मदद करती हैं और अपनी समस्याओं के समाधान के लिए पहल करती हैं तथा उसके समाधान तक पहुंचती हैं।

इस प्रकार हम देख सकते हैं महिला स्वयंसहायता समूह 'तंगहाली व गरीबी से जूझती महिलाओं के लिए नवजीवन का संदेश लेकर आए हैं। स्वयंसहायता समूह से जुड़कर महिलाएं एक–दूसरे की मदद करके जीवन की चुनौतियों का समाधान ढूढ़ने में समर्थ हुई हैं। स्वयंसहायता समूह महिला सशक्तिकरण के लिए आवश्यक आधार तैयार करता है। समूहों में जुड़कर महिलाएं शिक्षा, स्वरोजगार, कानूनी अधिकार, सरकार द्वारा चलाई जा रही कल्याणकारी योजनाओं, स्वास्थ्य व पोषण के बारे में जानकारी प्राप्त करती हैं। इन समूहों में आकर वे अपने जीवन से जुड़ी परेशानियों को एक–दूसरे से कहती सुनती हैं और सही निर्णय लेने में सक्षम होती हैं। स्वयंसहायता समूह के माध्यम से उनका खुद के जीवन पर आत्मनियंत्रण बढ़ता है और वे महत्वपूर्ण निर्णय लेने में समर्थ होती हैं। समूहों के द्वारा उनका बाह्य परिवेश से जुड़ाव बढ़ता है और उनमें दुनियादारी की व्यावहारिक समझ विकसित होती है। अब उन्हें कोई आसानी से बेवकूफ नहीं बना पाता है और उनके अनेक प्रकार के शोषण व उत्पीड़न में कमी आती है क्योंकि समूह की सदस्य मदद व परामर्श के लिए हर कदम पर उनके साथ होती हैं। इससे वे अपने आप को असहाय नहीं महसूस करती हैं और उनमे आश्चर्यजनक आत्मविश्वास का विकास होता है। अब उनके साथ कोई अन्याय करता है तो सहन करने की बजाय उसका विरोध करने के लिए तैयार रहती हैं। इन सबसे पूरे महिला वर्ग की सशक्तता बढ़ती है और उनके जीवन में आनन्द व खुशहाली आती है।

महिला स्वयंसहायता समूह के उद्देश्य

- लक्षित क्षेत्र की महिलाओं को महिला स्वयंसहायता समूह की आवश्यकता के प्रति संवेदीकृत करना।
- महिला सशक्तिकरण की प्रक्रिया को शुरु करने के लिए समूह के माध्यम से उन्हें संगठित करना और उनके अन्दर समूह–भावना जागृत करना।
- समूह की महिलाओं में आत्मविश्वास और क्षमताओं को विकसित करना।
- समूह की महिला सदस्यों के अन्दर बचत की आदत का विकास करना और आर्थिक रूप से सक्षम बनाने के लिए आय संवर्धन कार्यक्रम चलाने के लिए तैयार करना।
- समाज में लैंगिक भेदभाव को धीरे–धीरे खत्म करना। सामाजिक–आर्थिक तथा सांस्कृतिक रूप से महिला–पुरुष के बीच समानता लाना।
- महिला सदस्यों के जीवन में गुणात्मक बदलाव लाने के लिए उन्हें परिवार नियोजन, प्रजनन, स्वास्थ्य, संतुलित आहार, टीकाकरण आदि के बारे में जानकारी देना व जागरूक करना।

स्वयंसहायता समूह के कार्यक्षेत्र

बहुत सारे लोगों के बीच यह मिथ्या धारणा है कि स्वयं सहायता समूह के द्वारा केवल आर्थिक गतिविधियां ही चलायी जाती हैं। इसके द्वारा बचत को संचित किया जाता है, ऋणों का लेन–देन होता है और छोटी–छोटी आय उपार्जक गतिविधियां चलायी जाती हैं। लेकिन स्वयंसहायता समूह का कार्यक्षेत्र इससे अधिक विस्तृत है। इसके द्वारा हम महिलाओं के जीवन से जुड़े दूसरे मुद्दों का हल भी ढूंढ़ सकते हैं। इसके द्वारा महिलाएं–बाल विवाह, पर्दाप्रथा, कन्या भ्रूणहत्या, महिला हिंसा व उत्पीड़न, लैंगिक भेदभाव, महिला शिक्षा,

अधिकार, पारिवारिक जीवन से जुड़ी परेशानियां, तलाक, परित्याग, भरण–पोषण, भत्ता आदि से जुड़े अन्य विषयों को उठा सकती हैं और मिलकर समुदाय व समूह के सदस्यों को संवेदीकृत कर सकती हैं। साथ ही इनके समाधान के लिए आवश्यक कदम भी उठा सकती हैं। इसके अतिरिक्त समूहों के माध्यम से सदस्य स्वास्थ्य, पोषण व देखभाल से जुड़ी अनेक महत्वपूर्ण जानकारियां प्राप्त कर सकती हैं। उनकी पोषण, स्वास्थ्य, प्रसव व गर्भावस्थाकाल से जुड़ी सावधानियों व देखभाल तथा सरकारी सुविधाओं की जानकारी व पहुंच आसान होती है। परिवार नियोजन व टीकाकरण से जुड़ी बातें व इसके लिए आवश्यक मानसिक प्रेरणाएं समूह के सदस्यों को एक–दूसरे से प्राप्त होती हैं। घर या बाहर किसी प्रकार की संकटपूर्ण स्थिति आने पर समूह की सदस्य बेहद मददगार सिद्ध होती हैं और वे एक–दूसरे की हर संभव मदद करती हैं। सभी में परस्पर पारिवारिक सदस्य की भांति प्रेम व सौहार्द का रिश्ता विकसित होता है। वे अधिकार के लिए मिलकर आवाज उठाना सीखती हैं। अब वे कहीं भी एक साथ जाती हैं और सरकारी योजनाओं का भी लाभ अधिक कुशलता से लेने में समर्थ होती हैं।

स्वयंसहायता समूह क्या हैं ?

स्वयंसहायता समूह एक समान सामाजिक–आर्थिक स्तर के आस–पड़ोस के लोगों का एक ऐसा समूह है जो नियमबद्ध तरीके से संचालित हो और आपसी सहयोग व संसाधनों से विकास के लिए प्रयासरत हो, जिससे जीवन की मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति हो सके तथा वे अपने जीवन पर बेहतर नियंत्रण कर सकें। सामान्यतया समूह में 15–20 सदस्य होते हैं। सदस्यों द्वारा हर महीने छोटी–छोटी बचत करके धनराशि इकठ्ठा की जाती है। समूह द्वारा बचत की जाने वाली धनराशि, इसकी अवधि तथा सदस्यों को किन उद्देश्यों हेतु ऋण दिया जा सकता है, इसका निर्णय स्वयंसमूह के सदस्य करते हैं। समूह के सदस्यों की नियमित बैठक होती है, जहां वे अपनी समस्याओं पर चर्चा करते हैं। समूह की कार्यप्रणाली लोकतान्त्रिक होती है, जिसमें सदस्यों को अपने विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता होती है। निर्णय सबकी सहमति से लिए जाते हैं। समूह द्वारा स्वयं अपने अभिलेखों का रखरखाव किया जाता है। समूह का बैंक में एक बचतखाता खोला जाता है जिसका संचालन स्वयं सदस्यों द्वारा किया जाता है।

स्वयंसहायता समूह का सदस्य किसको बनाया जाए ?

- महिला की समूह से जुड़ने की इच्छा हो।
- एक परिवार से एक समूह में एक ही सदस्य हो।
- समान आर्थिक स्तर के हो।
- एक व्यक्ति एक ही समुदाय का सदस्य हो।
- सदस्य महिला गरीबी रेखा के नीचे हो।
- विधवा, तलाकशुदा, परित्यक्ता व कमजोर वर्ग के सदस्यों को वरीयता।

बचत महत्वपूर्ण क्यों?

जीवन में जब कभी कोई संकटकालीन परिस्थिति आती है तो इससे निपटने के लिए एक बड़ी रकम की जरुरत होती है। एक सामान्य गरीब आदमी के लिए इकट्ठी रकम जुटाना मुश्किल होता है लेकिन यदि शुरु से ही थोड़ी–थोड़ी बचत की जाए तो ऐसी स्थितियों में हम स्वयं अपनी मदद कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त निम्न कारणों से बचत आवश्यक है–

- इससे फिजूलखर्ची पर रोक लगती है।
- कर्ज के लिए जमीन, गहनें आदि साहूकार के पास नहीं रखने पड़ते हैं।
- समूह को सरकारी योजनाओं की मदद प्राप्त करने के लिए।
- विवाह, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि के लिए धन समय पर उपलब्ध होता है।
- समूह से जरुरी कार्यों के लिए आसानी से ऋण उपलब्ध हो सकता है।
- साहूकार व महाजनों के चंगुल से बचने के लिए।
- बचत करने से पैसा सुरक्षित रहता है।

स्वयंसहायता समूह के संचालन की प्रक्रिया

समूह के औपचारिक गठन के बाद समूह के सदस्य छोटी–छोटी बचत (यह राशि समूह के सदस्य मिलकर तय करते हैं) को संग्रहित करते हैं। कुछ समय के बाद समूह ऋण देने का कार्य प्रारम्भ कर सकता है। ऋण के लेन–देन के सम्बन्ध में नियम सबकी सहमति से पूर्व में बना लिए जाने चाहिए। एक निश्चित अवधि के बाद जब बचत नियमित रूप से होती रहे तो समूह का बैंक में खाता खुलवा लेना चाहिए। इससे समूह की धनराशि सुरक्षित रहती है और बैंक द्वारा जमा धन पर ब्याज का लाभ मिलता है। साथ ही जमाराशि के अनुसार मैचिंग ग्रांट भी प्राप्त हो सकता है। बैंक में खाता खुलवाने हेतु सदस्यों को फोटोग्राफ, खाता खोलने हेतु समूह का प्रस्ताव, समूह की नियमावली, परिचय–पत्र आदि की आवश्यकता होती है। आय संवर्द्धन कार्यक्रमों के संचालन के लिए स्वयंसहायता समूहों को सरकार की ओर से बैंकों के माध्यम से अनुदानयुक्त ऋण देने की योजनाएं संचालित हैं, जिसका लाभ लिया जा सकता है।

महिला स्वयंसहायता समूह के संचालन हेतु सुझाव

- समूह की नियमित रूप से साप्ताहिक या पाक्षिक बैठकें होनी चाहिए। बैठकों में 75–80 प्रतिशत सदस्यों की उपस्थिति होनी चाहिए।

लोग संगठन की शक्ति को समझने लगे हैं

सिस्टर मंजू

पूर्वी उत्तर प्रदेश में **अस्मिता** स्वयंसेवी संगठन के लिए काम कर रही सिस्टर मंजू ने सफलतापूर्वक हजारों स्वयंसहायता समूहों का गठन किया है और उनका संचालन कर रही हैं। इस दौरान हुए अनुभव **सिस्टर मंजू** ने **डॉ. सुखपाल जी श्रीवास्तव** के साथ बातचीत में बांटे।

प्रश्न– स्वयंसहायता समूह गरीबों की ताकत के रूप में किस तरह काम कर रहा है ?

उत्तर– दुनिया में दो तरह की ताकत होती है मैन पावर व मनी पावर। गरीबों की ताकत उनके हाथ में होती है। उनके संगठित होने पर उनमें बड़ी ताकत आ जाती है। एक समूह के द्वारा लोगों को संगठित करने में सफलता मिली है। इससे उनकी आमदनी बढ़ती है। समूह ने उनकी सामाजिक इज्जत बढ़ायी है, उनमें सामूहिकता की भावना उत्पन्न की है। इससे लोग एक–दूसरे की ताकत बनकर उभरे हैं।

प्रश्न– क्या आपको लगता है कि समूह के द्वारा गरीबों की दुनिया को बदला जा सकता है ?

उत्तर– निश्चित रूप से समूह गरीब लोगों के जीवन में आमूल चूल स्थायित्वपूर्ण बदलाव ला सकता है, लेकिन यह बेहद चुनौतीपूर्ण काम है। इसके लिए बहुत ही समर्पण व सावधानी के साथ काम किये जाने की जरुरत है। इसके लिए ईमानदार व समर्पित कार्यकर्ता की जरुरत है।

प्रश्न– समूह के द्वारा क्या केवल आर्थिक गतिविधियां ही चलायी जा रही हैं या सामाजिक समस्याओं के लिए भी कुछ किया जा रहा है?

उत्तर– यह मेरा व्यक्तिगत अनुभव है कि जब महिलाएं बचत व अन्य तरीकों से कुछ आर्थिक उपार्जन करती हैं तो उनकी परिवार में इज्जत बढ़ती है। उनका अपने निजी जीवन पर नियंत्रण बढ़ता है और वे अपने छोटे–छोटे निर्णय खुद लेने में सक्षम होती हैं। समूह से जुड़ी महिलाएं जब आपस में मिलती हैं तो वे अपनी–अपनी समस्याओं को भी उठाती हैं, बहुत–सी परेशानियां बातचीत के दौरान ही हल हो जाती हैं। उनमें साथ–साथ रहने से अन्याय व दमन के विरुद्ध आवाज उठाने की हिम्मत आती है। रसड़ा, बलिया, उ0प्र0 में महिला समूह की महिलाओं ने गांव के दबंगों के खिलाफ सामूहिक आवाज उठाकर उनके कब्जे से सार्वजनिक तालाब व जमीन को छुड़वाया। कम मजदूरी पर जबर्दस्ती काम कराये जाने का विरोध किया। कई जगहों पर शराब की दुकानों को बंद कराया। महिलाओं पर होने वाले जुल्म का विरोध किया।

प्रश्न– क्या समूह की सदस्यों को घरेलू हिंसा व उत्पीड़न को रोकने में कुछ मदद मिली है?

उत्तर– हम ऐसा तो नहीं कह सकते हैं कि समूह की महिलाओं का उत्पीड़न रुक गया है, उनके साथ होने वाली मारपीट खत्म हो गयी है लेकिन उनमें कमी जरुर हुई है। अब समूह की महिलाएं पुरुषों के उत्पीड़न को सहन करने के लिए तैयार नहीं हैं और अपने अधिकारों के प्रति सचेत हुई हैं।

प्रश्न– इसका मतलब है कि समूह के द्वारा महिला सशक्तिकरण भी हो रहा है।

उत्तर–निश्चित रूप से समूह की महिला सदस्याओं की बौद्धिक ताकत व तर्कशक्ति बढ़ी है। उनका आत्मविश्वास बढ़ा है, उनमें घरेलू हिंसा के विरुद्ध आवाज निकालने की हिम्मत आयी है। अब वह पुरुषों के हाथ की कठपुतली नहीं रही हैं।

प्रश्न– समूह के संचालन में कैसी–कैसी दिक्कतें सामने आती हैं?

उत्तर– सबसे बड़ी परेशानी यह होती है कि अधिकतर सदस्य महिलाएं निरक्षर होती हैं, इससे रिकार्ड रखने व डाक्यूमेंटेशन में कठिनाई आती है। बैंकों व सरकारी क्षेत्र में लालफीताशाही व भ्रष्टाचार के कारण ऋण व दूसरे सहयोग लेने में अनेक चक्कर लगाने पड़ते हैं।

प्रश्न– समूह के संचालन में क्या सावधानियां रखनी चाहिए ?

उत्तर– समूह को सफलता से चलाने के लिए सबसे जरूरी है कि सभी बैठकों, निर्णयों, बचत, आंतरिक व बाह्य ऋण आदि का बहुत ही पारदर्शी व उचित तरीके से रखरखाव करना चाहिए। समूह के सदस्यों की आय संवर्द्धन गतिविधियों के सफलतापूर्वक संचालन के लिए प्रशिक्षण, अनुश्रवण व प्रेरणादायक निर्देशन आवश्यक है। समूह में किसी प्रकार फूट न पड़ने पाए, इसका भी ध्यान रखना आवश्यक है।

प्रश्न– आप अपने कार्यानुभव के आधार पर समूह के कुछ सकारात्मक परिणामों के बारे में बताएं।

उत्तर– समूह के द्वारा ग्रामीण पिछड़े क्षेत्रों में परिवर्तन की सुखद बयार शुरू हुई है। इससे ब्याज पर पैसे देने वाले साहूकारों का नुकसान हुआ है। सरकारी सेक्टर में भ्रष्टाचार में कमी आ रही है। सदस्यों की सरकारी योजनाओं में भागीदारी व पहुंच बढ़ रही है। ये लोग अब जागरूक हो रहे हैं। यह बहुत बड़ी कामयाबी है कि लोग संगठन की शक्ति को समझने लगे हैं और इसमें उनका विश्वास लगातार बढ़ रहा है।

- समूह की एक आचार संहिता (समूह प्रबन्ध प्रतिमान) बनी होनी चाहिए, जिससे सदस्य बंधे हों। समूह की कार्यशैली में लोकतांत्रिक तौर–तरीका अपनाया जाना चाहिए, जहां पर सदस्य अपने विचारों को स्वतंत्रतापूर्वक रख सकें।
- सभी सदस्यों की निर्णय करने व नीति निर्धारण प्रकिया में सहभागिता होनी चाहिए।
- समूह की बैठकों के पूर्व उसका एजेंडा निश्चित होना चाहिए और उसी के अनुरूप विचार–विमर्श होना चाहिए।
- सभी बैठकों की कार्यवाही का लेखन होना चाहिए और लिए गए निर्णय पर सदस्यों की जिम्मेदारी सुनिश्चित की जानी चाहिए।
- समूह के सदस्यों की नियमित बचत से कॉरपस फण्ड का निर्माण किया जाना चाहिए। समूह कॉरपस फण्ड का उपयोग समूह में सदस्यों के बीच आन्तरिक ऋण देने में होना चाहिए।
- समूह में वित्तीय प्रबन्ध के तौर–तरीके विकसित होने चाहिए, जिसके अन्तर्गत ऋण स्वीकृति की प्रक्रिया, ऋण वापसी की समय सीमा और ब्याज–दर पूर्व निर्धारित होनी चाहिए।
- समूह के सदस्यों की बैठक में ऋण सम्बन्धी निर्णय सहभागी निर्णय प्रकिया से लिया जाना चाहिए।
- समूह का उसी क्षेत्र के किसी बैंक में समूह बचत खाता खुला होना चाहिए, जिसमें आन्तरिक ऋण वितरण के बाद बचे हुए धन को जमा किया जाए।
- समूह को कुछ महत्वपूर्ण आधारभूत कागजातों का उचित तरीके से रखरखाव करना चाहिए जैसे कार्यवाही पुस्तिका, उपस्थिति पंजिका, ऋण बही खाता, सामान्य बहीखाता, कैशबुक, बैंक पासबुक एवं वैयक्तिक पासबुक आदि।
- समूह के द्वारा कुछ समय के अन्तराल में एक सामुदायिक कार्य अवश्य होते रहना चाहिए जैसे सामुदायिक स्वच्छता, नशे के विरुद्ध जनजागरण, टीकाकरण के प्रति जागरुकता, बच्चों का स्कूल में पंजीकरण आदि।
- समूह के द्वारा सामूहिक निर्णय के अनुसार सदस्यों के बीच आय संवर्धन कार्यक्रम चलते रहने चाहिए।

समूह की गतिविधियां लगातार चलती रहे, इसका प्रयोग होना चाहिए। शुरुआत में सदस्य महिलाओं में संकोच, आशंका, डर व हिचक रहती है। धीरे–धीरे नियमित रूप से बैठकों में भाग लेने से उनमें परस्पर विश्वास बढ़ता है और वे मिलजुलकर समूह की गतिविधियों में भाग लेने लगती हैं। सदस्य महिलाओं के द्वारा आर्थिक गतिविधियों में भागीदारी बढ़ने लगती है। सदस्य महिलाओं के द्वारा आर्थिक गतिविधियों का चुनाव स्थानीय आवश्यकताओं, मांग व आपूर्ति को ध्यान में रखते हुए किया जांना चाहिए। समूह परिपक्व हो जाए, तभी इनकी शुरुआत की जाए। आर्थिक गतिविधियां सदस्यों द्वारा व्यक्तिगत या सामूहिक रूप से शुरु की जा सकती हैं। इसको चलाने के लिए बैंक या अन्य संस्थाओं से ऋण लिया जा सकता है। इसके लिए सदस्य महिलाओं को शुरु की जाने वाली गतिविधि के लिए उचित संस्था से प्रशिक्षण व विशेषज्ञों से परामर्श लेना चाहिए।

स्वयंसहायता समूह के स्थायित्व के लिए आवश्यक है कि सभी सदस्य महिलाओं की समान रूप से सहभागिता हो। इसके लिए सदस्यों की विभिन्न पहलुओं पर समझ विकसित होनी चाहिए। इसके लिए यह आवश्यक है कि सभी सदस्य महिलाएं समूह के कार्य को स्पष्ट समझती हों, उनमें रुचि रखती हों एवं अपनी सामर्थ्य के अनुसार उस कार्य में भाग लेती हों।

स्वयंसहायता समूह तभी प्रभावी रूप से कार्य कर सकता है जब समूह का वातावरण सहज, सबके लिए समान नियम, नये प्रयोग करने की स्वतंत्रता व सबके अनुभवों व विचारों का आदर हो। रुचिकर वातावरण निर्माण में सभी सदस्य योगदान करें। स्वयंसहायता समूह का कोई भी उद्देश्य तभी सार्थक ढंग से पूर्ण हो सकता है जब तक सभी सदस्य महिलाएं समर्पण व ईमानदारी से प्रयास करें। यदि किसी समुदाय में समूह ने यह निर्णय लिया है कि गांव की सभी गर्भवती महिलाओं का पंजीकरण व प्रसवपूर्ण देखभाल करवाया जाना है तो उसके लिए सबको मिलकर प्रयास करना होगा। यदि कुछेक सदस्य ही सक्रिय हैं तो उद्देश्य की प्राप्ति नहीं हो पाएगी और समूह स्थायी नहीं हो पाएगा। समूह के स्थायित्व के लिए बेहद जरुरी है कि समूह में निर्णय सबकी सहमति व प्रजातांत्रिक प्रक्रिया अपनाते हुए किए जाएं।

स्वयंसहायता समूह की सफलता के लिए आवश्यक है कि प्रत्येक सदस्य की योग्यता, अनुभव व क्षमता के अनुसार कार्य का बंटवारा किया जाए तथा उनका यथोचित समान रूप से आदर किया जाए। सदस्य महिलाओं में परस्पर मित्रता का सम्बन्ध विकसित हो तथा उनकी जरुरतों के प्रति समूह में पर्याप्त संवेदनशीलता हो। स्वयंसहायता समूह की सफलता को और अधिक गति देने के लिए उसे अन्य समूहों, स्वैच्छिक संस्थाओं, सरकारी विभागों, पंचायत व अन्य सहयोगी जनों से सम्पर्क व सम्बन्ध बनाना चाहिए। नेटवर्किंग द्वारा समूहों का आपस में जुड़ाव होने से विकास तीव्र गति से होता है और उससे कार्यक्रम व गतिविधियों को सही दिशा प्राप्त होती है। अब तक चलाये जा रहे स्वयंसहायता समूहों ने यह सिद्ध कर दिया है कि उनके अन्दर गांव की अनपढ़ महिलाओं के जीवन में सामाजिक व आर्थिक क्रांति लाने का सामर्थ्य है। स्वयंसहायता समूहों ने हमारी ग्रामीण महिलाओं को देश के सामाजिक तथा आर्थिक विकास के लिए तैयार किया है।

(लेखक सामाजिक कार्यकर्ता हैं।)
ई–मेल : sukhpalji@yahoo.com

UPSC-2008 में अपार सफलता!
लोक प्रशासन
(हिन्दी माध्यम)
By Atul Lohiya
(A person who believes in scientific approach and hard work)
UGC-NET
QUALIFIED IN TWO SUBJECTS
(HISTORY & PUB. ADMINISTRATION)
लोक प्रशासन (हिन्दी माध्यम) में सर्वोच्च स्थान के बाद एक बार फिर सर्वोच्च अंक
गिरिवर दयाल सिंह
390
(183/207)
मुकेश बहादुर सिंह : 342 (157/185)
अजय हिलोरी : 338 (151/187)
बलराज मीणा : 333 (160/173)
अनुभव वर्मा : 330 (.../...)
राजीव रंजन : 326 (149/177)
वीरेन्द्र कुमार पटेल : 323 (131/192)
और भी ...
38 Rank
Shikha Rajput
51 Rank
Giriwar Dayal Singh
Virendra K. Patel 254 Rank
Ajay Hilori 391 Rank
Mukesh B. Singh 465 Rank
Shailendra S. Rathour 615 Rank
110 Rank
Navneet Bhasin
435 Rank
Ashish S. Thakur
251 Rank
Pradumna K. Singh
358 Rank
Pradeep K. Sanger
391 Rank
Shiv Shankar
522 Rank
Mihir Rayka
Photograph Not Available
710 Rank
Drop S. Meena
Photograph Not Available
754 Rank
Amit Pamasi
Interview Guidance (Samvardhan)
Bhoomika Patel
Pramod Kumar
Santosh Kumar
Nitina Nagori
Mukesh Rathor
Armstrong Pame
Aakash Singhai
Jai Prakash Singh
Photograph Not Available
P. Shanti Sudha
आप भी प्राप्त कर सकते हैं 400+ अंक, कैसे? Winning Strategy के साथ
New Batch (Delhi): 4th & 25th June '09
Admission Open from 21st May '09
New Batch (Allahabad): 14th June '09
Admission Open from 21st May '09
* UPSC के साथ UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS की भी तैयारी;
संस्थान के सफल विद्यार्थियों द्वारा समय-समय पर मार्गदर्शन!
JOIN FOUNDATION COURSE
-: SHORT TERM COURSE :-
WRITING SKILL, ESSAY & PERSONALITY DEVELOPMENT
पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध
(पूर्णतः संशोधित; परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)
MAINS - 3500/-
MAINS + PRE. - 4500/-
डाक खर्च - 200/- अतिरिक्त
Send DD/MO in favour of 'Atul Lohiya'
लोक प्रशासन
Mains के साथ-साथ
Pre. के लिए भी बेहतर विकल्प
'अतुल लोहिया'
शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी
"PRABHA"
DESIRELESS SERVICE
DOUBTLESS KNOWLEDGE
प्रभा
AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION
105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009
Phone : 27653498, 27655134, 32544250. Cell.: 9810651005, 9313650694
Branch : 305/250, COLONELGANJ, NEAR COLONELGANJ POLICE STATION, ALLAHABAD.

KH-6-09-1

ग्रामीण महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाता 'जीविका'

प्रवीण कुमार पाठक

जीविका परियोजना के माध्यम से बोधगया की महिलाएं पहले से सशक्त हुई हैं। उनकी आर्थिक स्थिति सुधरी है और उन्होंने सामाजिक समस्याओं का भी मिलकर समाधान निकाला है। आज इस गांव में महाजन प्रथा भी समाप्त हो चुकी है। यही नहीं इस संगठन के कार्यों को देखते हुए अन्नपूर्णा जीविका महिला ग्राम संगठन को जनवितरण प्रणाली का कार्य भी सौंपा गया है जहां पर महिलाएं जनवितरण कार्य कर रही हैं जोकि बिहार में एक ऐतिहासिक कदम हैं।

ग्रामीण क्षेत्रों में विश्व बैंक एवं बिहार सरकार द्वारा संपोषित 'जीविका' परियोजना के द्वारा बिहार राज्य के गया जिला के बोधगया प्रखण्ड के गांव में रह रही आर्थिक एवं सामाजिक रूप से पिछड़ी महिलाओं के सशक्तिकरण का कार्य किया जा रहा है। 'जीविका' परियोजना के, माध्यम से बोधगया प्रखण्ड की 13 पंचायतों के 55 गांवों में 356 स्वयंसहायता समूह एवं 18 ग्राम संगठनों के जरिए 4248 महिलाओं की आत्मनिर्भरता बढ़ायी जा रही है। बोधगया प्रखण्ड में जीविका परियोजना के द्वारा कई महत्वपूर्ण कार्य ग्रामीण क्षेत्रों में किये गये हैं। बोधगया के अन्तर्गत शेखवारा पंचायत के शेखवारा गांव में 20 स्वयंसहायता समूह एवं 1 ग्राम संगठन का गठन किया गया है। ग्राम संगठन शेखवारा है। इस संगठन में 18 एस.एच.जी. शामिल हैं। संगठन ने गांव में नशाखोरी, जुआ को बन्द कराया है, साथ ही साथ गांव में चल रही सरकारी जनकल्याणकारी योजनाओं पर भी निगरानी का कार्य कर रहा है। शुरुआत में ग्राम संगठन से जुड़ी महिलाओं को काफी परेशानी का सामना करना पड़ा मगर धीरे–धीरे स्थिति सामान्य होती गयी। इस ग्राम में एस.एच.जी. से जुड़ी सभी महिलाएं हस्ताक्षर करती हैं एवं पैसा समूह में बचत कर आपसी लेन–देन को बढ़ावा भी देती हैं। बैंक भी इन समूहों को आर्थिक सहयोग करता है।

समय–समय पर जीविका परियोजना सामुदायिक निवेश कोष (CIF) के माध्यम से आर्थिक जरूरतों को पूरा करती है। इस संगठन के कार्य को देखते हुए मगध प्रमण्डल के आयुक्त के.पी. रमैय्या ने अन्नपूर्णा जीविका महिला ग्राम संगठन को जनवितरण प्रणाली (PDS) का कार्य सौंपा है जोकि बिहार में एक ऐतिहासिक कदम है। यहां पर महिला समूह जन वितरण प्रणाली की दुकान चला रहे हैं। इस दुकान से गरीबी रेखा से नीचे के परिवार वालों को समय पर राशन उपलब्ध हो रहा है। साथ ही साथ इस गांव में समूह से जुड़ी महिलाएं 2 प्रतिशत ब्याज पर समूह से ऋण लेकर कार्य करती हैं तथा वे अपना ऋण समय पर समूह को ब्याज के साथ चुकता करती हैं जिस कारण आज इस गांव में महाजन प्रथा समाप्त हो गयी है। इस गांव में रह रही महिला किसी न किसी समूह से जुड़ी हुई है। वही बोधगया प्रखण्ड में झिकटीया पंचायत में भी महत्वपूर्ण बदलाव जीविका परियोजना के द्वारा किया जा रहा है। झिकटीया पंचायत में जीविका के माध्यम से सात गांवों में 50 एस.एच.जी एवं 3 ग्राम संगठनों का गठन किया गया है। यहां पर भी जन वितरण प्रणाली की दुकान ग्राम संगठन को देने की योजना पर कार्य हो रहा है।

स्वयंसहायता समूह में प्रशिक्षण प्राप्त करती महिलाएं

जीविका परियोजना के द्वारा श्री विधि के द्वारा जैविक खाद को बनाने की तकनीक एस.एच.जी से जुड़ी महिलाओं को सिखाकर जीविकोपार्जन का साधन मुहैया कराया जा रहा है जहां यह कार्य महिलाओं के विकास में मील का पत्थर साबित हो रहा है।

बोधगया प्रखण्ड के अन्तर्गत मोराटाल पंचायत में, मनकोशी, छाछ, परेवा, मोराटाल एवं गाफा खुर्द पंचायत में नावा एवं गाफा कला में जून 2008 को जीविका परियोजना का कार्य शुरू हुआ है। परियोजना के माध्यम से इन गांवों में महिला स्वयंसहायता समूह का गठन का कार्य हो रहा है। अभी मोराटाल पंचायत में कुल 70 एस.एच.जी एवं 5 ग्राम संगठन का निर्माण हो गया है। जून 2008 के पहले इस पंचायत के गांव की स्थिति बेहद ही दयनीय थी। महिलाओं में एकता का अभाव एवं एक–दूसरे के शिकवा–शिकायत में ही महिलाओं का दिमाग लगा रहता था। मोराटाल पंचायत के राजस्व ग्राम मनकोशी का एक टोला है राहुल नगर, जहां पर 120 घर–परिवार रहते हैं जिसमें 100 घर–परिवार मांझी (अनु.जाति) के हैं वहां पर पहली बार जीविका कार्यकर्ता 16 जून 2008 को समूह गठन के उद्देश्य से गए थे तो उस गांव की महिलाएं एवं पुरुष बहुत ही बदसलूकी से पेश आए। यहां तक कि जीविका कार्यकर्ता को बंधक बनाने का भी प्रयास किया क्योंकि यह क्षेत्र नक्सल प्रभावित है।

फिर भी जीविका कार्यकर्ता के मनोबल पर इसका कोई प्रभाव नही पड़ा। तदुपरान्त 18 जून 2008 को टोले पर जीविका कार्यकर्ता ने पुनः प्रवेश किया। एवं उसी दिन उस टोले पर 2 एस.एच.जी का गठन कर डाला। गठन के बाद तो उस टोला राहुल नगर में बदलाव शुरू होने लगा। इस तरह 15 दिनों में 6 एस.एच.जी का गठन हुआ। इसके बाद राहुल नगर की महिलाओं में जागरुकता आयी एवं 3 माह बाद महिलाओं ने पानी की समस्या का समाधान निकाला। उस टोले पर पीने के पानी की समस्या ज्यादा थी। उस टोले पर सरकारी हैण्डपम्प लगा हुआ था लेकिन जागरुकता एवं आपसी तालमेल नहीं रहने के कारण हैंडपंप 2 वर्षों से बन्द पड़ा था। वहां के एस.एच.जी से जुड़ी महिलाओं ने सामाजिक सुधार कमेटी बनायी, जिसका अध्यक्ष कुसुर देवी एवं कोषाध्यक्ष शिवरानी देवी को चुना गया। कमेटी ने समूह के प्रत्येक सदस्य से 5 रुपये चन्दे के रूप मे जमा किये तथा एक कोष का निर्माण किया एवं चापाकल (हैंडपंप) को चालू करवाया। अब इस कोष में हमेशा पांच हजार रुपये रहते हैं जो गांव की समस्याओं को दूर करने पर खर्च किए जाते हैं। जीविका परियोजना के सहयोग से इस टोले में 7 एस.एच.जी एवं

एक ग्राम संगठन का निर्माण किया गया। ग्राम संगठन का नाम चांदनी जीविका महिला ग्राम संगठन रखा गया है। इस संगठन के माध्यम से राहुल नगर में जरूरतमंदों को सरकार द्वारा चलाई जा रही जनकल्याणकारी योजनाओं से अवगत करा कर योजनाओं तक पहुंच बनाई। जैसे आम आदमी बीमा योजना, कन्या सुरक्षा योजना, सामाजिक सुरक्षा पेंशन, बंध्याकरण का लाभ दिलवाया तथा राहुल नगर में निर्मित सामुदायिक भवन को ग्राम संगठन ने अपने हाथ में लिया।

मोराटाल पंचायत के मनकोशी गांव में 13 एस.एच.जी तथा एक ग्राम संगठन का निर्माण हुआ। ग्राम संगठन के माध्यम से गांव में छोटी–मोटी समस्याओं का निराकरण हो रहा है। ग्राम संगठन के द्वारा सामुदायिक भवन को अपने कब्जे में लेकर वे अपनी बैठक करते हैं। पहले उस भवन पर गांव के दबंगों का कब्जा था जिसमें वे पुआला एवं जानवर रखते थे तथा वे भवन को निजी कार्य के लिए उपयोग करते थे। शुरूआत में महिलाओं को इन दबंगों के साथ सामना करना पड़ा मगर महिलाओं की एकता के सामने इन दबंगों को झुकना पड़ा। अब महिलाएं अपनी मासिक बैठक इसी सामुदायिक भवन में कराती हैं तथा गांव के विकास के बारे में निर्णय लेती हैं। इनकी बैठक में जिला के जिलाधिकारी, प्रखण्ड विकास पदाधिकारी तथा अन्य अधिकारी भी भाग लेते हैं तथा सरकारी योजनाओं से अवगत कराते रहते हैं। यहां के ग्राम संगठन के सदस्य समूह निर्माण एवं एकता को बढ़ावा देने मे भी सहयोग करते हैं।

जीविका परियोजना के कार्यकर्ता सिर्फ इन महिलाओं के मार्गदर्शक के रूप में कार्य करते हैं। बाकी सारे निर्णय इस संगठन से जुड़ी महिलाओं द्वारा लिए जाते हैं ताकि उनमें निर्णायक क्षमता का विकास हो और वे अपने विकास के बारे में खुद सोचे एवं आगे बढ़ने की सूझ–बूझ इनके दिमाग में उत्पन्न हो। जीविका परियोजना के कार्य करने के पहले इन गांवों मे रह रही महिलाओं में एकजुटता का अभाव व जागरुकता की कमी थी, लेकिन जीविका परियोजना के आने के बाद इन महिलाओं में एकजुटता आयी एवं जागरुकता पैदा हुई। आज समूह से जुड़ी हुई सभी महिलाओं को हस्ताक्षर करने का भी ज्ञान है। अब ये महिलाएं अंगूठा लगाने के बजाय हस्ताक्षर करती हैं जो काबिलेतारिफ है।

जीविका परियोजना के तहत सूक्ष्मवित्त योजना के द्वारा गरीब परिवार की महिलाओं को एस.एच.जी. से जोड़कर ऋण मुहैया कराकर गरीबी दूर करने का प्रयास युद्ध स्तर पर किया जा रहा है। शेखवारा गांव के समूह से जुड़ी बरती देवी ने श्री विधि तकनीक द्वारा 1 कढ़ा में 6 मन धान उगाकर कीर्तिमान स्थापित किया है। आज बरती देवी श्री विधि के द्वारा धान की खेती के प्रचार–प्रसार का कार्य कर रही हैं। जीविका परियोजना का मुख्य उद्देश्य है कि गांव में रह रहे गरीब परिवारों का जीवन सुखमय हो।

(लेखक सामुदायिक समन्वयक,
जीविका परियोजना, बोधगया बिहार में कार्यरत हैं।)
ई–मेल : p.k.pathak@brlp.in

सदस्यता कूपन

मैं/हम **कुरुक्षेत्र** का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का (जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,

नई दिल्ली–110 066

साक्षात्कार

गरीबों को दिशा देता 'प्रदान'

गांवों में अपार संभावनाएं हैं –सौमेन बिस्वास

'प्रदान' (प्रोफेशनल असिस्टेंस फॉर डेवेलपमेंट एक्शन) देश के सात गरीब राज्यों-बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, राजस्थान, छत्तीसगढ़, उड़ीसा और पश्चिम बंगाल में सक्रिय रूप से कार्य कर रहा है। 'प्रदान' के कार्यकर्ता इन राज्यों के बेहद पिछड़े हुए इलाकों में काम कर रहे हैं। और उन्हीं के प्रयासों के चलते इन क्षेत्रों में 'प्रदान' 11 हजार से अधिक स्वयं सहायता समूह गठित कर चुका है और करीब दो लाख परिवारों को अपने से जोड़ने में सफल हुआ है। 'प्रदान' के इस लक्ष्य तक पहुंचने के पीछे न केवल इसके समर्पित कार्यकर्ताओं का योगदान है बल्कि जाहिर तौर पर एक सोची-समझी योजनाबद्ध रणनीति है। 'प्रदान' किस तरह से अपने कार्यों को अंजाम दे रहा है, वह कैसे स्वयं सहायता समूह बनाता है और जरूरतमंद लोगों की मदद करता है, उसे कहां से आर्थिक सहायता मिलती है, ऐसे ही कई सवालों का जवाब पाने के लिए संपादक ललिता खुराना ने 'प्रदान' के कार्यकारी निदेशक सौमेन बिस्वास से बातचीत की।

प्रश्न 'प्रदान' कब और कैसे अस्तित्व में आया?

उत्तर 'प्रदान' 1983 से काम कर रहा है। इसी वर्ष इसका सोसायटीज एक्ट के तहत दिल्ली में रजिस्ट्रेशन हुआ। प्रदान की सबसे बड़ी धारणा ये है कि जो अच्छे समझदार युवा लोग हैं, जिम्मेदार और योग्य हैं, उन लोगों को निचले स्तर पर काम करना चाहिए तभी समाज में विकास संभव है। अब सवाल यह था कि ऐसे लोगों की पहचान कैसे की जाए और उन्हें किस तरह इस दिशा में काम करने के लिए तैयार किया जाए। ऐसे में 'प्रदान' ने यह बीड़ा उठाया। 'प्रदान' को शुरू करने का श्रेय श्री दीप जोशी और श्री विजय महाजन को जाता है। श्री विजय महाजन प्रदान के पहले संस्थापक निदेशक थे। विजय जी का विचार था कि जो स्वयंसेवी संस्थान गांवों में काम कर रहे हैं, उन्हें तकनीकी और प्रबंधकीय मदद दी जाए। हालांकि दीप जी का विचार था कि जो अच्छे पढ़े–लिखे 'जिम्मेदार और योग्य' लोग हैं, और जिन्हें काम करने की इच्छा है, उन्हें गांवों में निचले स्तर पर काम करने में लगाया जाए।

सौमेन बिस्वास, कार्यकारी निदेशक, 'प्रदान'

प्रश्न आप कब से 'प्रदान' से जुड़े हैं?

उत्तर मैं 1987 से 'प्रदान' से जुड़ा हूं। मैं कृषि में स्नातक हूं और ग्रामीण प्रबंधन संस्थान, आनंद (गुजरात) से रूरल मैनेजमेंट में दो साल का पी.जी. कोर्स किया है। प्रदान से जुड़ने से पहले मैंने नेशनल डेयरी डेवलपमेंट बोर्ड में भी काम किया है।

प्रश्न 'प्रदान' के उद्देश्य क्या हैं?

उत्तर हमारा मकसद है रोजगार के माध्यम से लोगों को सशक्त बनाना। 'प्रदान' से जुड़े लोग ऐसे रोजगारपरक क्षेत्रों में काम कर रहे हैं जिससे उन्हें न केवल रोजगार मिले बल्कि सशक्त होने का भी अवसर मिले।

प्रश्न आपके विचार में अब तक 'प्रदान' किस हद तक अपने उद्देश्यों में कामयाब हो पाया है?

उत्तर 'प्रदान' बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल के पश्चिमी हिस्से और राजस्थान के दक्षिणी हिस्से में काम कर रहा है। मार्च 2009 तक इस संस्थान से एक लाख 80 हजार 600 परिवार जुड़ चुके हैं। वर्ष 2007–08 तक 'प्रदान' द्वारा गठित स्वयंसहायता समूहों की संख्या 8 हजार 983 थी जोकि वर्ष 2008–09 में बढ़कर 11,433 तक पहुंच चुकी है। इन स्वयंसहायता समूहों से करीब डेढ़ लाख महिलाएं जुड़ी हुई हैं। इसी तरह स्वयंसहायता समूहों के सामूहिक संघों की संख्या, जोकि 2007–08 में 526 थी, 2008–09 में बढ़कर 620 हो गई है।

प्रश्न "सामूहिक संघ" (क्लस्टर एसोसिएशन)क्या होते हैं और इनकी क्या भूमिका है?

उत्तर एक पंचायत में जैसे 4–5 गांव आते हैं वैसे ही जितने स्वयंसहायता समूह उस पंचायत के अंतर्गत आते हैं, उनका एक सामूहिक संघ बनता है जिसमें प्रत्येक एस. एच. जी. की दो या तीन महिलाएं शामिल होती हैं। ये सामूहिक संघ एक–दूसरे के साथ जुड़े रहते हैं। और किसी भी समस्या से निपटने में एस. एच. जी. को मदद करते हैं। ये सामूहिक संघ स्वयंसहायता समूहों की एकजुटता के प्रतीक हैं।

प्रश्न 'प्रदान' को अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने में किस–किस तरह की चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है?

उत्तर हम जिन क्षेत्रों में काम कर रहे हैं, वे बेहद गरीब राज्य हैं और उन राज्यों में भी हमने ऐसे क्षेत्रों को चुना है जो बेहद पिछड़े हुए हैं। ये दूरस्थ इलाके हैं जहां दूर–दूर तक कोई बाजार तक नहीं है और तकरीबन सारे ही लोग गरीब हैं। यही नहीं बल्कि हम ऐसे लोगों के बीच काम कर रहे हैं जो अपने बारे में ही यह धारणा बना चुके हैं कि हमसे कुछ होने वाला नहीं है और हम जैसा जीवन जी रहे हैं, वही हमारी नियति है। इन लोगों में आगे बढ़ने की या अपना जीवनस्तर ऊंचा उठाने की इच्छा तक नहीं है। ऐसे में हमें दो मोर्चों पर अपनी लड़ाई लड़नी पड़ती है। पहला तो बाहरी संघर्ष है जिसमें हमें एक ऐसी जगह में काम करना है जहां बिजली, पानी, सड़कें, बाजार तक नहीं हैं और दूसरा अंदरुनी संघर्ष है जो लोगों की मानसिकता से जुड़ा है जिसे बदलना सबसे कठिन चुनौती है। यहां सिर्फ पूंजी देकर लोगों से काम करवा पाना संभव नहीं है, उन लोगों से हर स्तर पर जुड़ना पड़ता है। उनमें विश्वास जगाना पड़ता है कि वे काबिल हैं और बहुत कुछ कर सकते हैं। 'प्रदान' सफलतापूर्वक इन दोनों मोर्चों पर डटकर काम कर रहा है जिसकी बदौलत आज वह करीब दो लाख परिवारों से साथ काम कर रहा है।

प्रश्न 'प्रदान' किस तरह से एक आम गरीब आदमी की मदद करता है?

उत्तर हमारी तीस टीमें होती हैं। प्रत्येक टीम में एक टीम लीडर होता है और 5–10 कार्यकर्ता होते हैं। ये लोग गांव–गांव में जाकर महिलाओं को संगठित करते हैं और उन्हें बचत करने के लिए प्रेरित करते हैं। इस तरह दो–तीन महीने बचत करने के बाद उन महिलाओं में न केवल आत्मविश्वास बढ़ता है बल्कि एक–दूसरे पर विश्वास भी बढ़ता है। अब जब ये महिलाएं एकजुट होकर पर्याप्त बचत कर लेती हैं तो फिर हमारे कार्यकर्ता प्रत्येक परिवार के साथ बैठते हैं और उन्हें उनके उपलब्ध साधनों के हिसाब से रोजगार चुनने के बारे में मार्गदर्शन करते हैं। हमारे कार्यकर्ता उन्हें बताते हैं कि जो काम वे करना चाहते हैं उसके लिए पूंजी कहां से आएगी? तकनीक क्या होगी और कैसे उपलब्ध होगी? उन्हें कहां से प्रशिक्षण दिया जाएगा, आदि। उन्हें यह भी बताया जाता है कि उन्हें सम्बद्ध कार्य के लिए ऋण मिल सकेगा या कोई सरकारी अनुदान उपलब्ध है। हम जिन क्षेत्रों में काम करते हैं वहां लोगों के पास जमीन तो है पर उपजाऊ नहीं है या बंजर है। ऐसे में हम उन्हें बताते हैं कि उन्हें खेती के लिए कहां से ऋण अथवा अनुदान मिल सकता है और उन्हें किस चीज की खेती करनी चाहिए और उसके लिए अच्छी खाद और बीज कहां से मिलेंगे। हम लोग एक–एक परिवार के साथ 4–5 साल जुड़े रहते हैं ताकि प्रयासों की निरंतरता बनी रहे। हम परिवार को नैतिक 'सपोर्ट' देते हैं और तकनीकी और वित्तीय जरूरतों को पूरा करने का रास्ता दिखाते हैं। हम उन्हें व्यक्तिगत नहीं बल्कि सामूहिक तौर पर बढ़ावा देते हैं।

प्रश्न 'प्रदान' एस. एच. जी. को गठित करने में मदद करता है या पहले से गठित एस. एच. जी. की मदद करता है?

उत्तर जैसाकि मैंने आपको बताया जहां हम लोग काम कर रहे हैं, वे बेहद गरीब और पिछड़े हुए इलाके हैं। वहां एस. एच. जी. पहले से नहीं हैं, हम लोग ही वहां एस. एच. जी. बनाते हैं। और हम सरकार पर भी दबाव डालते हैं कि उन्हें पैसा दिया जाना चाहिए।

प्रश्न 'प्रदान' को वित्तीय सहायता कहां–कहां से मिलती है?

उत्तर हमें सरकार से काफी मदद मिलती है। ग्रामीण विकास मंत्रालय, नाबार्ड, और यू एन डी पी से मदद मिलती

है। यू एन डी पी हमें सीधे तौर पर तो नहीं पर सरकार के जरिए सहायता देता है। विशेष स्वर्ण जयंती ग्राम योजना और आदिवासी कार्यक्रमों के जरिए भी मदद मिलती है। 'नरेगा' से भी लोगों को काफी मदद मिली है।

प्रश्न किसी स्वयंसहायता समूह को वित्तीय सहायता लेने में आप कैसे मदद करते हैं?

उत्तर हम उन्हें योजना बनाने में मदद करते हैं। जरूरत पड़े तो उनके साथ बैंक भी जाते हैं। हो सकता है कि बैंक कहे कि हम सीधे ऋण नहीं दे सकते, स्वयं सहायता समूह के जरिए दे सकते हैं। ऐसे में हम बैंक को ऋण की वापसी के प्रति आश्वस्त करने में भी उनकी मदद करते हैं।

प्रश्न स्वयंसहायता समूहों को किन–किन संस्थाओं से वित्तीय सहायता उपलब्ध है?

उत्तर नाबार्ड है, स्थानीय बैंक हैं और राज्य सरकारों की भी बहुत–सी योजनाएं हैं। हमें यह देखना होता है कि कौन–सी योजना से उसे मदद मिल सकती है।

प्रश्न स्वयंसहायता समूह के गठन के लिए किस तरह की योग्यता देखी जाती है?

उत्तर हम 'गरीब' को देखते हैं और कोई योग्यता नहीं देखते। हमारा काम है उन्हें योग्य बनाना। योग्यता देखेंगे तो गरीब छूट जाएंगे।

प्रश्न स्वयंसहायता समूह को ऋण मिल सके, इसके लिए क्या योग्यता चाहिए होती है?

उत्तर यह बैंक देखता है। कितनी बचत है, आमदनी का जरिया क्या है और ऋण वापसी की काबलियत है या नहीं। हमारा काम है एक अच्छा, सशक्त स्वयंसहायता समूह बनाना। और अगर ऐसा है तो बैंक को पैसा देने में कोई समस्या नहीं होती।

प्रश्न ऐसा कोई रुचिकर अनुभव बताइए जो आपको 'फील्ड' में काम करते हुए हुआ हो?

उत्तर हम जिन परिवारों से जुड़े हुए हैं उन परिवारों में जिस तरह से बदलाव आ रहा है, यह देखना काफी रुचिकर है। लोगों की जिंदगी बदल रही है, इसे देखकर हमारे कार्यकर्ताओं को भी काफी खुशी, उत्साह और शक्ति मिलती है। यही वजह है कि वे लोग ऐसी जगहों पर काम कर पाते हैं। आज ही मुझे एक टीम लीडर का ई–मेल मिला है जोकि झारखंड के एक बेहद पिछड़े हुए जिला गुमला में काम कर रहा है। वहां 'गुमला आम' की अच्छी फसल होने से वो बेहद उत्साहित है और मेल में उसने हमारी सभी शाखाओं में गुमला आम बेचने का प्रस्ताव भेजा है।

प्रश्न 'प्रदान' से जुड़ना आपका 'मिशन' है या 'प्रोफेशन'?

उत्तर 'मिशन' भी है और 'प्रोफेशन' भी। जो काम हम कर रहे हैं उसके लिए बेहद निपुणता, जानकारी और अच्छा व्यवहार चाहिए। लोगों को भी यह समझ लेना चाहिए कि जो विकास के कार्य हैं उसके लिए व्यावसायिक आचार–व्यवहार (प्रोफेशनल डिसीप्लीन) की जरूरत होती है तभी कोई बड़ा कार्य किया जा सकता है। केवल 'मिशन' तय करना ही पर्याप्त नहीं है।

प्रश्न अगर हमारा कोई पाठक स्वयंसहायता समूह बनाना चाहता हो तो आप किस तरह से उसका मार्गदर्शन करेंगे?

उत्तर हम जहां–जहां काम कर रहे हैं वहां हमारे टीम लीडर से सम्पर्क कर सकते हैं। हमें ई–मेल लिख सकते हैं। हमारा ई–मेल का पता है– headoffice@pradan.net। इसके अलावा क्या पूछा गया है, देखना पड़ेगा। जो हम कर पाएंगे, जरूर करेंगे।

प्रश्न आप हमारी पत्रिका के जरिये युवा पाठकों को क्या संदेश देना चाहेंगे?

उत्तर गांवों में अपार संभावनाएं हैं। साधनों का उपयोग नहीं हुआ है। अगर गांवों में ठीक से काम हो तो गांवों में जिंदगी बहुत सुधर सकती है और उन्हें खुशहाल बनाया जा सकता है। इससे गांवों से शहरों की ओर पलायन भी बंद होगा।

कोटा साड़ी उद्योग के बढ़ते कदम

पूनम मेहता

'एकता' में शक्ति है। इसी भावना से समूहों में संगठित होकर काम करने वाली महिला बुनकरों की कायापलट हो गई। इन साहसी और उद्यमशील महिला बुनकरों ने यूनिडो के परियोजना अधिकारी के सहयोग और मार्गदर्शन में स्वयंसहायता समूह बनाए और आज इन्हीं स्वयंसहायता समूहों के बूते हथकरघा उद्योग को पुनः सम्बल मिला है और संस्कृति एवं विरासत पुनर्जीवित हो उठे हैं।

राजस्थान के दक्षिण पूर्व में स्थित औद्योगिक नगरी कोटा जो वर्तमान में शिक्षा जगत में विख्यात है, इससे कुछ ही दूर स्थित है कैथून। काली मिट्टी की सोंधी गंध से महकता यह कस्बा प्रसिद्ध है अपनी कोटा डोरिया व मुसूरिया साड़ियों के लिए। शोख रंगों में लिपटी, हाथ से बुनी यह सूती साड़ियां इतनी मनमोहक व आरामदेह होती हैं कि इन्हें पहनकर व्यक्तित्व निखर उठता है।

सदियों पहले मैसूर में आये कारीगरों से वर्मा जाति ने यह हुनर सीखा। राजाश्रय प्राप्त होने के कारण यह पीढ़ी–दर–पीढ़ी बढ़ती गई। वर्तमान मे यह कला अंसारी परिवारों की सामाजिक पहचान, आर्थिक आधार व पैतृक परंपरा है।

कैथून के अतिरिक्त बारां, इटावा मांगरोल, बूंदी, केशोरायपाटन आदि में ही हथकरघे से यह साड़ियां बुनी जाती हैं। कुछ वर्ष पहले तक पूरा परिवार एक हथकरघे पर ही पलता था। अकेले कैथून में ही एक हजार से ज्यादा हैण्डलूम हैं पर पॉवरलूम पर बनी साड़ियों का सस्ता रेट, अधिक उपलब्धता, अधिक विविधता ने हथकरघा उद्योग को काफी क्षति पहुचांयी।

साड़ी बनाने में प्रयुक्त सोने की जरी, सूत, रेशम सभी के दाम बढ़ने व मजदूरी की दरों में इजाफा होने के कारण नौबत यहां तक आ पहुंची कि हर घर से एक–दो सदस्य आजीविका कमाने बाहर जाने लगे।

साड़ियां बनाने का कार्य अधिकांशतः अंसारी महिलाएं ही करती हैं। मांग में कमी से इनका जीवन प्रभावित होने लगा तो इन्हें विभिन्न सरकारी, गैर–सरकारी संगठनों ने आशा की किरण दिखाई। नारी अपने अदम्य साहस से जीवन की हर पराकाष्ठा को छू लेती है। भावनाओं और जीवन में उसका कोई सानी नहीं

है। वह अपने कर्तव्य के माध्यम से सामूहिक सौजन्य का निर्माण करती है और अपने आंतरिक गुणों के कारण पूजी जाती रही है। उसकी क्षमता, उनकी क्रियात्मकता का रचनात्मक योग ही देश, परिवार और समाज की विकासशील सत्ता का द्योतक है और यही कारण है कि अपनी महत्ता की नियामक आज वह स्वयं बनी है।

कुछ ऐसी ही जीजिविषा दिखाई कैथून की इन साहसी महिला बुनकरों ने। यूनिडो के परियोजना अधिकारी के सहयोग व मार्गदर्शन से इन्होंने दस–दस सदस्यों के स्वयंसहायता समूह बनाए। पढ़ी–लिखी महिलाओं ने नेतृत्व की कमान सम्भाली और अन्य महिलाओं को समझा–बुझाकर समूह में शामिल किया गया। थोड़े पैसे सबके द्वारा लगाए गए और सन् 2004 में 13 स्वयंसहायता समूह जब तैयार हो गए तो यूनिडो की मदद से इन महिलाओं के लाभार्थ कानूनी सहायता शिविर लगाए गए और सरकारी एवं गैर–सरकारी जानकारी उपलब्ध कराई गई।

इन समूहों में से कुछ महिलाओं को चुनकर मध्य प्रदेश के जिला चंदेरी भेजा गया। जहां इन्होंने साड़ी बुनने की विविध विधाओं के अतिरिक्त समूहों को दिए जाने वाले सरकारी, गैर–सरकारी अनुदानों के बारे में भी जाना। चंदेरी से आने के पश्चात् इन सभी तेरह समूहों रानी कोटा डोरिया समूह, तस्लीम समूह, खुशबू, हिना समूह आदि ने मिलकर निर्माण किया 'कोटा वुमन, वीवर एसोसिएशन' का। एसोसिएशन बन जाने से जहां ये महिलाएं संगठित होकर बड़े से बड़े आर्डर की पूर्ति कर सकती थी, वही काम भी बंट गया और मुनाफा भी ज्यादा होने लगा। यूनिडो व आई.एल.ओ. जैसी संस्थाओं की आर्थिक मदद से महिलाएं कोटा के बाहर प्रदर्शनी, हाट, मेलों में जाने लगीं। मार्केटिंग के गुण इन्होंने वहीं से सीखे। दिल्ली, मुम्बई, कोलकाता, जयपुर आदि बड़े शहरों में ये महिलाएं माल बेचने लगी। सरल नान फार्मिंग डेवलमेंट एजेंसी के द्वारा भी इन्हें मदद दी गई।

राजस्थान की पूर्व मुख्यमंत्री श्रीमती वसुन्धरा राजे को भी फैशन फार डेवलमेंट स्कीम के तहत कोटा डोरिया व खादी को प्रोत्साहित करने हेतु कुछ समय पहले अन्तर्राष्ट्रीय वूमैन टूगैदर अवार्ड से नवाजा गया।

धीरे–धीरे महिलाएं और जागरूक हुई तो बैंकों से कर्ज लेना, सरकारी सहायता लेना आदि इन्होंने सीखा। बड़े आर्डरों को यह छोटे समूहों में बांट लेते, रंग व कपड़े की माप के आधार पर और उसी क्रम में मुनाफा भी बांट लेते। बांटने से आर्डर समय पर पूरा होता और काम भी नियमित मिल जाता। माल बनाकर कोरियर कर दिया जाता। महिलाओं के इस तरह संगठित होने से बिचौलियों की मुनाफाखोरी काफी हद तक कम हो गई। आज कैथून में पच्चीस सौ बुनकर और साठ मास्टर वीवर हैं।

के.डब्ल्यू.डब्ल्यू. संस्था के पास जब आर्डर होते हैं तब संस्था उसकी पूर्ति करती है और जब कभी नहीं होते तो व्यक्तिगत रूप से सेठों के लिए महिलाएं साड़ियां बुनती हैं। आजकल तो गर्मियों में कोटा साड़ी मैटीरियल के सलवार–सूट भी काफी प्रसिद्ध हो रहे हैं। हल्के, सूती व आरामदेह इन सूटों की मांग भी प्रचलन में है। संस्था के रूप में संगठित होने से महिला बुनकरों की मजदूरी सेठों द्वारा भी बढ़ा दी गई। पूर्व की भांति किसी का शोषण वो अब नहीं कर सकते। समूहों में संगठित होने के पश्चात् इन महिला बुनकरों की कायापलट हो गई और हथकरघा उद्योग को पुनः सम्बल मिला। इस तरह संस्कृति व विरासत पुनर्जीवित हो उठे।

एक साधारण साड़ी को हथकरघा पर बनाने में एक हफ्ते का समय लगता है और उसकी कीमत आठ सौ रुपये से शुरू होती है। एक काम वाली साड़ी छह से सात हफ्तों में तैयार होकर पच्चीस से तीस हजार तक बिकती है। फैशन के अनुरूप इन साड़ियों में रंग संयोजन, डिजाइन, प्रिंट आदि में लगातार सुधार हो रहा है। कढ़ाई की साड़ियों के अतिरिक्त बंगरू प्रिंट भी लोकप्रिय है।

हालांकि मुश्किलें अभी भी हैं जैसे मशीन और हस्तरचित साड़ियों में फर्क नहीं कर पाना, देश–विदेश में इन साड़ियों का पर्याप्त प्रचार–प्रसार नहीं होना, सोने की बढ़ती कीमतें इत्यादि। पर सक्षम जुझारू महिलाएं अपने बुलंद इरादों से मुश्किल पर विजय प्राप्त कर ही लेंगी।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई–मेल : Pratap_rayw@yahoo.com

चुनौतियों को अवसर बनाते स्वयंसहायता समूह

निशा शर्मा

मन में दृढ़ संकल्प हो और कुछ कर गुजरने का जज्बा हो तो संकट भी अवसर में बदल जाता है और लोग जुड़ते जाते हैं तथा एक कारवां चल निकलता है। सहयोग करने को अनेक हाथ भी आगे बढ़ जाते हैं। संकट हार जाता है और आत्मबल जीत जाता है। कुछ ऐसा ही हुआ महाराष्ट्र के लातूर में। वर्ष 1993 में महाराष्ट्र के लातूर में भूकंप आया था तो हर तरफ तबाही का आलम था। लोगों के बीच सरकार को लेकर काफी गुस्सा था। इसलिए वहां काम करना चुनौती से कम नहीं था। ऐसे में विपत्तियों की सतायी हुई महिलाओं को अपने पैरों पर खड़े होने में मदद की प्रेमा गोपालन और उनकी संस्था स्वयंशिक्षण प्रयोग ने।

प्राकृतिक आपदा के बाद लोग टूट जाते हैं। यह बात एक हद तक सच भी है, लेकिन यह भी उतनी बड़ी हकीकत है कि इसके बाद उनमें जीवन को लेकर एक नया जोश आ जाता है। वे अपने पैरों पर फिर से खड़े होने के लिए बेताब होते हैं। आपदा उन्हें और भी ज्यादा जीवट बना देती है। लातूर में हमने महसूस किया कि वहां लोगों को मदद की जरूरत तो थी, लेकिन वे उसी पर आश्रित नहीं थे। कुछ ऐसा ही हमें भुज और सुनामी से तबाह तमिलनाडु में भी देखने को मिला।' ऐसे में विपत्तियों की सतायी हुई महिलाओं को अपने पैरों पर खड़े होने में मदद की प्रेमा गोपालन और उनकी संस्था स्वयंशिक्षण प्रयोग ने। इसकी शुरुआत 1993 में ही हुई जब यहां प्राकृतिक आपदा आई।

नाम से तो यह संस्था शिक्षण से जुड़ी लगती है, लेकिन इसका दायरा काफी बड़ा है। प्रेमा गोपालन का कहना है कि 'हम लोगों की मदद स्वयंसहायता समूहों के जरिए करते हैं, जिसे महिलाएं चलाती हैं। हमारे साथ इस वक्त पांच से छह हजार महिला स्वयंसहायता समूह जुड़े हुए हैं। इन समूहों से कम से कम 50–60 हजार महिलाएं जुड़ी हुई हैं। हम इन्हीं स्वयंसहायता समूहों और पंचायतों के जरिये लोगों की मदद करते हैं।'

आज की तारीख में यह ऐसे सामाजिक कारोबारों को खड़ा करने में जुटी हुई हैं जिसके तहत बड़ी–बड़ी कंपनियां स्वयंसहायता समूहों के साथ साझेदारी करती हैं। इसमें इस बात पर भी जोर दिया जाता है कि उन स्वयंसहायता समूहों के प्रबंधन की जिम्मेदारी उन ग्रामीण महिलाओं की ही हो, जिन्होंने प्राकृतिक आपदा के दंश को झेला हो। जब आप महिलाओं का विकास करते हैं, उनके साथ पूरा का पूरा समुदाय भी आगे बढ़ता है।

स्वयंशिक्षण संस्था ने 'सखी रिटेल' के नाम से एक कंपनी भी शुरू की है। प्रेमा बताती हैं, 'हम तो बस ग्रामीण महिलाओं और बड़ी–बड़ी कंपनियों के बीच में संपर्क का काम करते हैं। अहम फैसले तो वे खुद लेती हैं। वैसे कंपनी ने अपने कुछ नियम भी बना रखे हैं। सौदा पक्का करने से पहले वह बड़ी–बड़ी कंपनियों के सामने यह शर्त रखाती हैं कि वह डिस्ट्रीब्यूटर–डीलर के नेटवर्क को छोड़ सारे सौदे 'सखी रिटेल' के जरिए ही करें।

प्रेमा बताती हैं कि, 'आप ही बताइए बिचौलियों के हटने से हर किसी को फायदा ही होता है। तो किन–किन दिक्कतों का सामना करना पड़ रहा है उनकी संस्था को? इसके जवाब में उन्होंने बताया कि, 'दिक्कतें तो हैं। हमारे पास कार्यशील पूंजी भी कम ही होगी। साथ ही हम सरकार से भी किसी तरह की मदद नहीं लेते। इसलिए हमें उन कंपनियों से पैसे कर्ज लेने पड़ते हैं, जिनके साथ हम सौदा करते हैं।' प्रेमा ने बताया कि 'हम पिछले 10 सालों से काम कर रहे हैं। हमारी वजह से आज कम से कम 60 हजार घरों की आय में 33 फीसदी का इजाफा हुआ है। माइक्रो–फाइनेंसिंग क्षेत्र में उतरने से 15 हजार घरों की कमाई और संपत्ति आज बढ़ी है। आज इन लोगों की कुल जमापूंजी 10 करोड़ रुपये हो चुकी है। साथ ही, हमारी संस्था से जुड़ी महिलाओं की जिंदगी भी काफी बदल चुकी है।

प्रेमा बताती हैं कि हमने ब्रिटिश पेट्रोलियम के साथ साझेदारी की है, जिसके तहत हम उनके नए स्टोव को अलग–अलग गांवों में बेच रहे हैं। इसके लिए हमने एक डिस्ट्रीब्यूशन चेन बनाई है। अब तक करीब 50–60 हजार परिवार पुराने और धुंआ फैलाने वाले चूल्हों को छोड़ इस नए स्टोव को अपना चुके हैं। इसका नेटवर्क 820 गांवों में फैला हुआ है। हमने इसके लिए काम करने वाली महिलाओं को नाम दिया है 'सखी' का। उनकी कोशिशों की वजह से आज की तारीख में 1820 महिला कारोबारी अपने पैरों पर खड़ी हैं और उनकी कुल आय 2.3 करोड़ रुपये है। उन्हें 2008 में नंद एंड जीत फाउंडेशन और यूएनडीपी की तरफ से सोशल एंटरप्रेन्योर ऑफ द इयर के लिए आखरी तीन में शामिल किया गया था।

पिछले सात–आठ सालों में उनकी जमापूंजी सात–आठ करोड़ रुपये हो चुकी है। साथ ही, उनकी स्थिति में भी सुधार हुआ है। उनकी वजह से अब उनके समुदायों की कन्याओं को बोझ नहीं, भगवान की नेमत माना जाता है। तो अब आगे क्या? इस बारे में उनका कहना है, 'फिलहाल तो हम अपनी संस्था से जुड़ी महिला स्वयंसहायता समूहों की तादाद को 12 हजार तक ले जाने की कोशिश कर रहे हैं। साथ ही, अपना दायरा भी मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान जैसे राज्यों तक बढ़ाना चाहते हैं।

इसके अलावा, अनेक ऐसी संस्थाएं मिल जाएंगी जो हालात की मारी महिलाओं को चुनौती से संघर्ष करने का मार्ग दिखाकर उन्हें स्थापित करने में मदद करती हैं। इनमें परित्यक्ता, विधवा या गरीबी की सताई हुई कोई भी सुनीता, अनीता या पुनीता नाम की महिला हो सकती है। ऐसी ही एक इन्द्रेश नाम की दक्षिणपुरी की रहने वाली महिला को उसका पति पांच साल के बेटे के साथ बेसहारा छोड़ कर चला गया। यह कहानी लगभग तीन साल पहले की है जब उसे किसी ने विद्या उद्योग केन्द्र का रास्ता दिखाया था। आज उसका बेटा स्कूल में मन लगाकर पढ़ रहा है। और इन्द्रेश को ऐसा सहारा मिल गया जिससे उसका गुजारा बखूबी हो जाता है जिससे वह बेहद खुश है क्योंकि विद्या उद्योग केन्द्र ने उसे आत्मसम्मान के साथ जीना सिखा दिया है।

यहां एक नहीं अनेक इंद्रेश हैं। लीलावती, आयु 65 वर्ष और निवासी दक्षिणपुरी। घर में इकलौता बेटा जब बीमार पड़ गया तो खाने के लाले पड़ गए। इस विषम परिस्थिति में लाचार लीलावती के लिए 'विद्या' एक भगवती के रूप में सामने आई। हिम्मत बढ़ायी, सिलाई का काम दिया। इतना ही नहीं आंख की कमजोरी जब सिलाई की राह में रोड़े अटकाने लगी तो जांच करवाकर चश्मा लगवा दिया। आज लीलावती के चेहरे पर भी लाली चमक रही है। वह विद्या की प्रशंसा करते नहीं थकती।

दक्षिणी दिल्ली के सैनिक फार्म में कार्यरत 'विद्या' एक ऐसी संस्था है जो सिर्फ बदहवास महिलाओं को ही नहीं बल्कि स्लम और पिछड़े क्षेत्रों की लड़कियों को भी स्वावलंबी बनाती है।

पर्यावरण को स्वच्छ और सुंदर बनाने के मिशन पर निकली यह संस्था महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा दे रही है।

यहां मुफ्त में सिलाई, कढ़ाई, पेपर के थैले, सीडी और कार्ड होल्डर, बैग, रजिस्टर, जूट के थैले, गुड़िया, मोबाइल कवर आदि बनाना सिखाया जाता है। साथ ही गुजारे और हाथ खर्च लायक पैसे, आने–जाने के लिए बसों का इंतजाम, चाय की व्यवस्था आदि यहां की खूबियां हैं। जहां इतना सब कुछ हो वहां कोई क्यों न जाए।

दक्षिणपुरी की रहने वाली तारावती (40) मार्च 2008 में इससे जुड़ी। ऐसा कोई काम नहीं जो वह नहीं जानती। सिलाई की मशीन चला रही तारावती कहती हैं कि घर का सारा काम कर सुबह 10 बजे यहां आ जाती हूं और दिन ढलने से पहले 3 बजे घर पहुंच जाती हूं। खर्चा पानी निकल आता है तो कुछ सुकून मिलता है।

पिछड़े वर्गों की सहायतार्थ स्थापित 'विद्या' की अध्यक्षा रेशमी मिश्रा कहती हैं कि बहुत अच्छा लगता है जब यहां की लड़कियां और महिलाएं अपने में एक अलग ऊर्जा का संचार पाती हैं। यहां पर कुल 25 महिलाएं काम करती हैं।

कार्यकारी बोर्ड की सदस्य प्रतिमा गोयल कहती हैं कि ऐसी लड़कियां जिनकी शादी हो जाती है वह कहीं और जाकर यहां सीखे हुनर से जीवनयापन योग्य कमा लेती हैं। 18 वर्ष से ऊपर की स्लम और पिछड़े वर्गों की सभी लड़कियां इस संस्था से जुड़कर अपने जीवन को बेहतर बनाने के तरीके सीख सकती हैं जिससे उनका आगे का भविष्य संवर सके। इसी के साथ वह आत्मनिर्भर भी बन सकें।

मध्य प्रदेश के एक पिछड़े से गांव में रहने वाली रेणुका पति की असाध्य बीमारी से अन्दर तक टूट चुकी थी। उसके पास न धन था और न काम शुरू करने के लिए अन्य सुविधाएं। बीमार पति और दो छोटे–छोटे बच्चों को घर छोड़कर बाहर नौकरी करने की परिस्थितियां भी नहीं थी। अपने गांव की चौपाल में लघु उद्योग विभाग के कर्मचारियों से प्रशिक्षण प्राप्त करके गांव के खेतों से आम, मिर्च, नींबू, लहसुन, अदरक, आंवला, गुलाब आदि खरीदकर अपनी झोंपड़ी में ही अचार, मुरब्बे, गुलकन्द जैसे उत्पाद तैयार करने शुरू किए जिनकी मांग पूरे वर्ष भर बनी रहती है। आज रेणुका ने एक स्वयंसहायता समूह का गठन कर लिया है जिसकी सदस्य आसपास के गांवों की उसके जैसी महिलाएं हैं। इस समय इसके समूह में बचत ऋण, उत्पादन, विपणन जैसी गतिविधियां बहुत तेजी के साथ चल रही हैं जिसके कारण यह गरीब और अनपढ़ महिला आसपास के क्षेत्र के लोगों के लिए उदाहरण और आदर्श बन गई है।

स्थान के अभाव और बढ़ते जनसंख्या घनत्व एवं औद्योगिकीकरण के कारण घरों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाला कचरा समस्या बनता जा रहा है और इसने तमाम लघु उद्योगों को तो अपने लपेटे में ले ही लिया है। इस कचरे और अपशिष्ट पदार्थों का न तो रखरखाव आसान है और न ही निपटान। इसका समाधान दक्षिण भारतीय जागरूक महिला पूनम कस्तूरी ने खोजा है। इसने गरीब और असहाय महिलाओं को संगठित करके एक स्वयंसहायता समूह का गठन किया। इनके अनुसार घरों और औद्योगिक प्रतिष्ठानों से निकलने वाला कचरा फायदे का कारोबार है। अधिकतर लोग अपना कचरा डालने से पहले यह सोचने की कोशिश ही नहीं करते कि आखिर इसका प्रभाव क्या होगा और यह कचरा कितना प्रदूषण फैलाएगा।

इस समूह ने डेली डम्प नाम से एक पात्र तैयार किया है जिसके कारोबार का आंकड़ा दो साल के अन्दर 12 लाख रुपये सालाना को छूने को बेताब है। टेराकोटा से निर्मित विभिन्न आकार और रंग के डेली डम्प के कम्पोस्टर कम्पोस्टिंग का काम आसान और साफ–सुथरा बनाते हैं। ये महिलाएं घरों और व्यावसायिक प्रतिष्ठानों में इन कम्पोस्टरों को फिट करती हैं तथा साथ ही सलाह और रखरखाव में मदद भी देती हैं। इन्हें बनाने के लिए स्थानीय कुम्हारों को संगठित किया गया है जिससे उनके रोजगार की संभावनाएं बढ़ गई हैं। कम्पोस्टर में तीन मटके एक के ऊपर एक रखे होते हैं। रसोई और व्यावसायिक प्रतिष्ठान से निकलने वाले कचरे को सबसे ऊपर वाले मटके में डाला जाता है। इससे बना कम्पोस्ट खाद 20 रुपये किलो की दर से आसानी से बिक जाता है। एक घर से प्रतिदिन औसत 750 ग्राम कचरा और एक लघु उद्योग इकाई से रोजाना लगभग 90 किलो कचरा निकलता है। यदि इसे पुनर्चक्रित किया जाए तो इससे बनने वाला कम्पास्ट जमीन की उर्वराशक्ति को बढ़ाता है। इस कचरा निपटान अभियान से तीन फायदे हुए हैं–पहला कचरे का निपटान संभव हुआ, दूसरा स्थानीय कुम्हारों को डेली डम्प के निर्माण से रोजगार प्राप्त हुआ और तीसरा कचरे से कम्पोस्ट खाद बनाने वाली महिलाओं को स्वरोजगार का जरिया मिल गया जिससे वे घर बैठे पैसा कमा सकती हैं।

(लेखिका समाजसेविका एवं पत्रकार हैं)
ई–मेल : nsharma@gmail.com

स्वयंसहायता समूहों से बदलती गांवों की तस्वीर

मयंक श्रीवास्तव

स्वयंसहायता समूह से मिले सूक्ष्म ऋण से महिलाओं को सूदखोरी व्यवस्था से काफी हद तक छुटकारा पाने में मदद मिली है। इन समूहों ने महिलाओं में बचत की आदत डाल दी है। महिलाएं समूहों से कर्ज लेकर अपनी और अपने परिवार की आवश्यकताओं को पूरा करती हैं और बेरोजगारी दूर करने में सहयोग देती हैं। स्वयंसहायता समूह से प्राप्त धन का प्रयोग पशुपालन, कृषि और घरेलू उद्योग के संचालन में किया जा रहा है। स्वयंसहायता समूहों की उपयोगिता ग्रामीण परिवारों की गरीबी दूर करने से अधिक देखा जाए तो महिला सशक्तिकरण में ज्यादा लाभदायक सिद्ध हुई है।

भारत के ग्रामीण क्षेत्र में सबसे बड़ी समस्या है कि लोगों को रोजगार पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हैं हालांकि सरकार लगातार ग्रामीण गरीबों को रोजगार दिलाने के प्रति कटिबद्ध है। इस दिशा में उचित पहल भी अनेक विकासपरक कार्यक्रमों के माध्यम से जारी है। लेकिन क्या देश में रोजगार की समस्या सिर्फ सरकार की ही पहल से ही दूर हो जाएगी? यह एक विचारणीय प्रश्न है। इसके लिए गैर–सरकारी संगठनों और अन्य लोगों को भी सामने आना होगा। इसी पहल के तहत भारत में महिलाओं द्वारा स्वयंसहायता समूह काफी कारगर साबित हो रहे हैं। कई राज्यों में स्वयंसहायता समूहों का प्रदर्शन सराहनीय रहा है। आवश्यकता इस बात की है कि स्वयं सहायता समूहों को सरकार पर्याप्त मात्रा में समय–समय पर धन उपलब्ध कराती रहे।

भारत में स्वयंसहायता समूह अपेक्षाकृत नया प्रयोग है लेकिन पिछले कुछ वर्षों में इसमें उल्लेखनीय वृद्धि हुई है। आंकड़ों पर ध्यान दिया जाए तो सर्वाधिक वृद्धि आंध्र प्रदेश में हुई है। स्वयं सहायता समूह महिलाओं का ऐसा अनौपचारिक समूह है जो अपनी बचत तथा बैंकों के सूक्ष्म वित्तीयन से अपने समूह की पारिवारिक व व्यक्तिगत जरूरत को पूरा करता है और विकास सम्बंधी

सहायता समूह के अंतर्गत हस्तशिल्प बनाती महिलाएं

कार्यक्रम के माध्यम से गरीबी जैसे अभिशाप को दूर करने तथा महिला सशक्तिकरण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रायः स्वयंसहायता समूह एकजुटता का प्रतीक होते हैं। यहां एक जैसी ही आर्थिक और सामाजिक स्थिति के लोग साथ आते हैं। समूह की सभी सदस्य थोड़ी–थोड़ी बचत करके आपसी सहयोग से महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। स्वयंसहायता समूह का विचार पड़ोसी देश बांग्लादेश में खूब चर्चित हुआ। ग्रामीण बैंक के नाम से प्रचलित इस समूह को प्रचारित और स्थापित करने का श्रेय प्रसिद्ध अर्थशास्त्री मोहम्मद युनूस को जाता है। इसी को देखते हुए भारत में भी यह विकसित हुई।

भारत में वैसे तो स्वयंसहायता समूह की शुरुआत 1992 में नाबार्ड ने एक योजना के तहत की, लेकिन इसे प्रचलित होने में काफी समय लग गया। भारत में गठित 35 लाख से अधिक स्वयंसहायता समूहों में से लगभग 90 प्रतिशत तो महिलाओं से ही संबंधित हैं। भारत में स्वयंसहायता समूहों की संख्या में महिलाओं की ज्यादा सहभागिता का कारण देश की लगभग 60 प्रतिशत गरीब महिला जनसंख्या का होना है।

भारत के ग्रामीण परिवारों को न केवल कृषि के लिए बल्कि पारिवारिक जिम्मेदारियां पूरी करने के लिए भी गैर–संस्थागत ऋण स्रोतों पर निर्भर रहना पड़ता है। देश में बैंकों ने अनेक योजनाएं तो चलायी लेकिन इसका फायदा वास्तव में बड़ा तबका ही ले गया। स्वयंसहायता समूह के माध्यम से जो पहल महिलाओं ने की है, वो सराहनीय है।

बिहार स्वयंसहायता समूहों के निर्माण के मामले में भारत को एक नई दिशा देने की स्थिति में है और इसका गवाह बिहार के मुजफ्फरपुर जिले का खुदीराम बोस स्टेडियम तब बना जब अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर स्वयंसेवी संगठन के बैनर के तले हजारों की संख्या में स्वयंसहायता समूह से जुड़ी महिलाओं ने एक बड़े मैदान को भर दिया और मुजफ्फरपुर की सड़कें भी समूह की महिलाओं से पट गई। भारत सरकार के तत्कालीन ग्रामीण विकास मंत्री रघुवंश प्रताप सिंह ने अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस के अवसर पर आयोजित रैली एवं सभा का उद्घाटन (2006) किया। अपने भाषण में मंत्री ने कहा कि आज की रैली देखने से ऐसा लगता है कि स्वयंसहायता समूह ग्रामीण गरीबों की आर्थिक उन्नति का सशक्त मंच बनकर उभर रहे हैं।

ग्रामीण विकास मंत्रालय की इस योजना से गरीब भारत की तस्वीर बदलने लगी है। इसमें कोई शक नहीं है कि स्वयंसहायता समूह का निर्माण भारत सरकार का एक क्रांतिकारी कदम है जिसके जरिए हम न सिर्फ लोगों को रोजगार उपलब्ध करा सकते हैं बल्कि एकजुट होकर सामाजिक कुरीतियां, नारी उत्पीड़न, छुआछूत, तथा ऊंच–नीच के भेदभाव को भी मिटा सकते हैं। वहां ये समूह ग्रामीण गरीबों की आर्थिक उन्नति का सशक्त मंच बनकर उभर रहे हैं।

स्वयंसहायता समूह की महिलाओं से सम्बद्ध कुछ योजनाएं

भारत सरकार महिला सशक्तिकरण के लिए कुछ योजनाएं चला रही है जो महिलाओं को रोजगार दिलाने में काफी मददगार साबित हो रही हैं।

स्वयंसिद्धा – स्वयंसहायता समूहों के माध्यम से महिलाओं के विकास तथा सशक्तिकरण की यह एक समन्वित योजना है जिसका मुख्य उद्देश्य सेवा प्रदान करने, सूक्ष्म वित्तीयन की उपलब्धता तथा सूक्ष्म उद्यमों को प्रोत्साहित करना है।

स्वशक्ति परियोजना – यह परियोजना अक्टूबर 1998 में ग्रामीण महिला विकास तथा सशक्तिकरण परियोजना के रूप में केन्द्र द्वारा बिहार, छत्तीसगढ़, गुजरात, हरियाणा, कर्नाटक, मध्य प्रदेश, उत्तराखण्ड और उत्तर प्रदेश में चलायी गई। यह परियोजना विश्व बैंक तथा इंटरनेशनल फण्ड फार एग्रीकल्चर डेवलेपमेंट द्वारा संयुक्त रूप से प्राप्त सहायता से चल रही है।

स्वावलम्बन – इस योजना का उद्देश्य महिलाओं को प्रशिक्षण तथा कुशलता प्रदान करना है जिससे वे पोषणीय स्तर पर स्वरोजगार या रोजगार पा सकें।

स्वधार – यह योजना भारत सरकार ने 2001–02 में शुरू की जो महिलाओं को कठोर परिस्थितियों में जैसे परिवार से त्यक्त

विधवाओं, जेल से छूटी ऐसी महिलाएं जिनका कोई ठिकाना नहीं हो, तथा प्राकृतिक विपदाओं से बेघर महिलाओं को सहायता पहुंचाती है।

इंदिरा महिला योजना – इसका उद्‌देश्य महिलाओं को अधिकारिता प्रदान करना है। इस योजना को 1995 के दौरान 200 विकास खण्डों में चलाया गया था।

महिला सश्रम – यह योजना उत्तर प्रदेश के 10 जनपदों के 23 ब्लॉकों में लागू है। इसके अंतर्गत 1435 तेज तथा मजबूत महिला समूह हैं जिन्हें 'संघ' कहा जाता है। ये संघ परम्परागत व्यवहारों को परिवर्तित करने से लेकर विकास क्रियाओं में भाग लेते हैं। इस योजना का प्रमुख उद्‌देश्य महिलाओं को सशक्त बनाना है जिससे बिना बाहरी सहायता के वे अपने सामूहिक कार्यक्रम को चला सकें।

भारत में स्वयंसहायता समूहों का विकास तो तेजी से हो रहा है लेकिन इन समूहों पर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया जा रहा है। प्रशिक्षण के अभाव के अलावा और भी कई कठिनाइयां और चुनौतियां हैं जिन पर ध्यान देकर स्वयंसहायता समूह व्यवस्था को अधिक कारगर व लाभप्रद बनाया जा सकता है। इनमें एक पहलू लघु ऋण देने वाले बैंकों की भूमिका से जुड़ा है। वाणिज्यिक बैंकों की ऋण नीतियां स्वयंसहायता समूहों की संरचना व उद्देश्यों से मेल नहीं खाती। पहली अड़चन तो यह आई कि इन बैंकों को स्वयंसहायता समूह की अवधारणा को समझने में ही लंबा समय लग गया। और जब समझा भी तो पर्याप्त ऋण उपलब्ध नहीं कराया। एक समस्या और है कि इन समूहों का विकास व अन्य समुचित एजेंसियों से जुड़ाव नहीं हो पाया है। वे एक अलग इकाई के रूप में काम करते हैं जिससे कोई बड़ी या महत्वपूर्ण गतिविधि को हाथ में नही ले पाते। इसका परिणाम यह होता है कि उनमें उत्साह नहीं रहता और निष्क्रिय होने लगते हैं। यदि इन समूहों को सरकारी परियोजनाओं या पंचायत के कार्यों से जोड़ दिया जाए तो इनकी उपयोगिता निश्चित रूप से बढ़ जाएगी। पंचायतें ग्रामीण क्षेत्र की स्थानीय संस्थाएं हैं जिनमें महिलाओं की भागीदारी अवश्य होनी चाहिए। पंचायतों से जुड़कर स्वयंसहायता समूह स्थानीय स्वशासन में हिस्सेदारी कर सकते हैं और साथ ही राज्य सरकार की विभिन्न परियोजनाओं के बारे में सुझाव भी दे सकते हैं।

पंचायतों से जुड़ाव बढ़ाने और स्वयंसहायता समूहों के सदस्यों को आवश्यक बैठकों में भाग लेने का अवसर देने की जरूरत है। इससे महिलाएं विकास कार्यों के बारे में निर्णय लेने की प्रक्रिया का हिस्सा बन सकेंगी जिससे न केवल बहुमूल्य और सार्थक सुझाव प्राप्त होंगे बल्कि उनमें आत्मविश्वास और प्रबंधकीय क्षमता भी विकसित होगी। किंतु एक स्वयंसेवी संस्था द्वारा किए गए अध्ययन से निराशाजनक तथ्य सामने आया है कि 50 प्रतिशत से भी कम समूह ऐसे हैं जिनका जुड़ाव पंचायतों से हुआ है। इसमें भी एक और दुखद पहलू यह है कि पंचायतों से जुड़े करीब 70 प्रतिशत समूहों की ओर से पंचायत के सदस्य ही ग्राम सभाओं की बैठकों में भाग ले लेते हैं और समूहों के सदस्यों को निर्णय लेने की प्रक्रिया से दूर रखा जाता है। सत्ता प्रतिष्ठानों तथा बैंकों में स्वयंसहायता समूहों के प्रति उपेक्षा का मुख्य कारण यह प्रतीत होता है कि ये समूह मुख्यतया महिलाओं द्वारा चलाए जाते हैं। महिलाओं को गंभीरता से न लेने से और उन्हें दुर्बल मानने की सदियों पुरानी मनोवृत्ति ही इस उपेक्षा व भेदभाव के लिए जिम्मेदार है। प्रशिक्षण और चेतना पैदा करने से इस प्रवृत्ति पर भी अंकुश लगाया जा सकता है।

जाहिर है कि स्वयंसहायता समूह व्यवस्था गांवों में गरीबी दूर करने और महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है जो समय के साथ–साथ अपनी कमजोरियों पर काबू पाते हुए आगे बढ़ती जाएगी। सरकार, स्वयंसेवी संगठन, बैंक, पंचायतें तथा गांवों के लोग इस नई अवधारणा को सफल बनाने में अपनी–अपनी भूमिका ईमानदारी से निभाएंगे तो निस्संदेह ग्रामीण महिलाओं का छोटा–सा प्रयास एक बड़े अभियान का रूप धारण कर लेगा और संपूर्ण भारत का विस्तार होगा।

(लेखक ग्रामीण मामलों के जानकार तथा उत्तरांचल आर्थिक विकास परिषद के सदस्य हैं।)

ई–मेल : mayank5782@gmail.com

लेखकों से

कुरुक्षेत्र के लिए मौलिक, अप्रकाशित लेखों का स्वागत है। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (Krutidev 010 CD में) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण–पत्र संलग्न हो। **कुरुक्षेत्र** में साहित्यिक रचनाएं प्रकाशित नहीं की जाती हैं। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाएं। लेख वरिष्ठ संपादक, **कुरुक्षेत्र** कमरा नं. 655, 'ए' विंग, गेट नं. 5, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110011 के पते पर भेजें।

कैसे ले कपास की अच्छी फसल

डॉ. वीरेन्द्र कुमार

'सफेद सोना' के नाम से जानी जाने वाली कपास की खेती पंजाब से लेकर केरल तक की जाती है। हमारे देश में लगभग 40 लाख किसानों द्वारा 90 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में कपास की खेती की जाती है। विश्व के कपास उत्पादन करने वाले देशों में भारत का दूसरा स्थान है। विश्व का एक चौथाई कपास उत्पादन क्षेत्र भारत में ही है। कपास के निर्यात से देश को लगभग 76,000 करोड़ रुपये की आर्थिक आमदनी होती है। कपास की देश व विदेश में बढ़ती मांग के चलते भारत कपास निर्यातक देशों में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

कपास मुख्य रूप से रेशे के लिए उगायी जाती है। इसके बीजो में भी 15–25 प्रतिशत तेल होता है। कपास के दानों से तेल निकालने के बाद प्राप्त खल दुधारू पशुओं को खिलाने के काम आती है। आजकल भारत में बी.टी. कपास का क्षेत्रफल दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। बी.टी. शब्द मिट्टी में पाये जाने वाले जीवाणु बैसिलय थुरिजैन्सिस से लिया गया है। इस जीवाणु में पाये जाने वाला जीन (बी.टी. जीन) एक तरह का विषैला पदार्थ पैदा करता है। वैज्ञानिकों ने विषैला पदार्थ पैदा करने वाले जीन को इस जीवाणु में से निकालकर आनुवांशिक अभियांत्रिक तकनीक द्वारा कपास की फसल में डालकर कीट प्रतिरोधी किस्मों का विकास किया। जब कीट इन पौधों के आर्थिक महत्व के भागों को खाता है तो विषैले पदार्थ को खाकर मर जाता है। किसानों द्वारा बी.टी. कपास उगाने से उनको कीटनाशक दवाईयों का कम छिड़काव करना पड़ता है। जिससे उनको आर्थिक लाभ भी अधिक होता है। भारत में कपास की उपज सबसे कम लगभग 300 कि.ग्रा. लिंट प्रति हेक्टेयर है जबकि विश्वभर की औसत उपज 580 कि.ग्रा. लिंट/प्रति हेक्टेयर। प्रस्तुत लेख में दी गयी नवीनतम तकनीकी, सस्य क्रियाओं व उन्नतशील किस्मों का प्रयोग कर किसान भाई कपास की फसल का बेहतर उत्पादन ले सकते हैं।

कपास के उत्पादन में कमी के प्रमुख कारण

- कपास की फसल में जैविक व अजैविक उर्वरकों का असंतुलित प्रयोग उत्पादन में कमी का प्रमुख कारण है।

- सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे आयरन, जिंक व मैगनीज की मृदा में कमी।
- गूलरों का असमय गिर जाना।
- कीटों और रोगों का अत्यधिक प्रकोप प्रमुख रूप से बालवर्म का।
- कपास की कम अवधि वाली किस्मों का अभाव।
- कपास की खेती वर्षा आधारित (65 प्रतिशत वर्षाधीन) क्षेत्रों में करना। जहां प्रकृति तथा मौसम से उत्पन्न कई जोखिम रहते हैं।
- उन्नत कृषि यंत्रों व कृषि क्रियाओं को नजरअंदाज करना।
- स्थानीय व देशी किस्मों के सस्ते व परम्परागत बीजों का प्रयोग करना।

कपास की फसल गूलर खिलने की अवस्था पर

भूमि का चयन व खेत की तैयारी

कपास की खेती रेतीली, लवणीय व जलभराव वाली मृदाओं को छोड़कर सभी भूमियों में सफलतापूर्वक की जा सकती है। वैसे कपास के लिए दोमट व काली मिट्टी उपयुक्त मानी जाती है। जिनकी जलधारण क्षमता व उपजाऊपन अधिक होता है। कपास के लिए मिट्टी का पी.एच. मान 7 के आस–पास अच्छा माना जाता है। खेत की पहली जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से करें ताकि भूमि में पड़े सभी प्रकार के कीड़े– मकोड़े एवं भूमि में उत्पन्न कीटाणु व खरपतवार नष्ट हो जाए। इसके बाद कल्टीवेटर से दो जुताई करके पाटा अवश्य लगायें।

बुवाई का समय

उत्तर भारत में कपास की बुवाई का उपयुक्त समय 15–25 मई के बीच है। जबकि मध्य भारत के सिंचित क्षेत्रों में कपास की बुवाई 15–30 मई तक अवश्य कर दें। वर्षा आधारित क्षेत्रों में कपास की बुवाई मानसून आने पर ही करें। दक्षिण भारत के सिंचित व वर्षाधारित क्षेत्रों में कपास की बुवाई अगस्त–सितम्बर में की जाती है।

कपास की उन्नतशील किस्में

आज कपास की बहुत सी उन्नतशील किस्में किसानों के लिए उपलब्ध है। परीक्षणों द्वारा पाया गया कि संकर बी.टी. कपास से स्थानीय प्रजातियों की तुलना में 25 से 65 प्रतिशत तक की बेहतर उपज प्राप्त की जा सकती है। कीटरोधी बी.टी. कपास की खेती अब वरदान साबित हो रही है। इन किस्मों में उत्पादन के लिए संकर–ओज की मौजूदगी तथा बोलवर्म जैसे कीटों से बचाव के लिए पर्याप्त मात्रा में कीट–प्रतिरोधित होती है। अतः कपास की अधिक उपज प्राप्त करने के लिए उन्नतशील और नवीनतम किस्मों का चयन अति आवश्यक है। विभिन्न जलवायुवीय क्षेत्रों के लिए कपास की उपयुक्त किस्मों का विवरण नीचे दिया गया है।

एच.डी. 107, डी.एस.–5, ए.एल.आर.ए. 51661, पूसा 8–6, राज 16, एल.एच.एच. 144, धनलक्ष्मी, बीकानेर नरमा, गंगानगर अगेती, आर.एस. 875, एच.डी. 167, एच. एस. 61, एल.एच. 1995 पूसा एस–2 इत्यादि।

बीज की मात्रा व उपचार

देशी व स्थानीय कपास के लिए 12–15 कि.ग्रा. तथा संकर किस्मों के लिए 3–4 कि.ग्रा. बीज प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करें। बीज जनित बीमारियों से कपास की फसल को बचाने के

सारणी 1: विभिन्न जलवायु के क्षेत्रों के लिए बी.टी. संकर कपास की प्रजातियां

कपास उत्पादक क्षेत्र	प्रजातियां
हरियाणा, राजस्थान, पंजाब, व पश्चिमी उत्तर प्रदेश	आर.सी.एच. 134, आर.सी.एच. 327, अंकुर 2524, एम.आर.सी. 3604, एम.आर. सी. 6301
महाराष्ट्र, गुजरात व मध्य प्रदेश	आर.सी.एच. 21, आर.सी.एच. 118, आर. सी.एच. 138 आर.सी.एच. 144, अंकुर–09 आर.सी.एच. 651, बन्नी (बी.टी.), मल्लिका, एम.ई.सी.एच.–12, एम.ई.सी.एच. 162, एम. ई.सी.एच. 184, एम.ई.सी.एच. 6309
तमिलानाडु, कर्नाटक व आन्ध प्रदेश	आर.सी.एच. 20, आर.सी.एच. 368, बन्नी (बी.टी.), मल्लिका, एम.ई.सी.एच.–12, एम. ई.सी.एच. 162, एम.ई.सी.एच. 184, एम. आर.सी. 6322, एम.आर.सी. 6918

कपास के साथ उड़द की बुवाई

और स्थानीय सिफारिश के आधार पर खाद एवं उर्वरकों की मात्रा सुनिश्चित करनी चाहिए। रबी फसलों की कटाई के तुरन्त बाद 10 टन प्रति हेक्टेयर की दर से अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद को समान रूप से सम्पूर्ण खेत में बिखेर दें। उत्तर भारत में कपास की सिंचित फसल से अच्छी पैदावार लेने हेतु 80–100 कि.ग्रा नाइट्रोटन, 40 कि.ग्रा. फास्फोरस व 30 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। जबकि वर्षा आधारित क्षेत्रों के लिए 40–50 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व 20–40 कि.ग्रा. फास्फोरस का प्रयोग करना चाहिए। दक्षिण भारत के सिंचित क्षेत्रों के लिए 40–60 कि.ग्रा. नाइट्रोजन व असिंचित क्षेत्रों के लिए 30–40 कि.ग्रा. नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की दर से प्रयोग करना चाहिए। नाइट्रोजन की आधी मात्रा व फास्फोरस एवं पोटाश की सम्पूर्ण मात्रा बुवाई के समय प्रयोग करनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर क्रमशः बुवाई के 30–35 दिनों व 80 से 85 दिनों बाद खड़ी फसल में समान रूप से छिटक देनी चाहिए। रासायनिक उर्वरकों की बढ़ती कीमतों और उनकी कम उपलब्धता के कारण कपास की फसल में जैविक उर्वरकों का प्रयोग भी बहुत आवश्यक है। जैविक उर्वरकों के प्रयोग से कपास की पैदावार में 15–20 प्रतिशत की बढ़ोतरी की जा सकती है। कपास की फसल में प्रयोग होने वाले जैविक उर्वरकों में एजोटोबैक्टर व फास्फेट घुलनशील जीवाणु प्रमुख है। जैविक उर्वरक सस्ते, आसानी से उपलब्ध और पर्यावरण हितैषी भी है। जिन मृदाओं में जिंक सूक्ष्म पोषक तत्व की कमी पायी जाती है वहां पर 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टेयर की दर से बुवाई के समय प्रयोग करना चाहिए। किसान भाई ध्यान रखे कि यदि वे कपास की फसल में गोबर की खाद, कम्पोस्ट या जैविक उर्वरकों का प्रयोग कर रहे है तो नाइट्रोजन की संस्तुत की गई मात्रा में से 30 कि.ग्रा. नाइट्रोजन कम कर दें।

लिए बीज का उपचार फफूंदनाशी घोल (10 लीटर पानी में 5 ग्राम एमिसान+1 ग्राम स्टैप्टोसाइक्लिन) +1 ग्राम सक्सीनिक अम्ल में 10–15 कि.ग्रा. बीज को लगभग 3–4 घंटे भिगोएं तथा छाया में सुखाकर बुवाई कर दें। किसान भाई ध्यान रखें यदि उन्होंने बीज किसी विश्वसनीय संस्था से खरीदा है तो उसे उपचारित करने की जरूरत नहीं है। यह बीज पहले से उपचारित होता है।

बुवाई की विधि

कपास का बेहतर उत्पादन लेने के लिए बुवाई हमेशा लाइनों में करनी चाहिए। कपास की फसल में पंक्ति से पक्ति की दूरी 75 सें. मी. रखनी चाहिए। प्रति इकाई क्षेत्र सामान्य पौध संख्या बनाये रखने के लिए दो बीज प्रति छिद्र बोने चाहिए। अंकुरण के 20 दिन बाद एक स्थान पर एक ही स्वस्थ पौधा रखें एवं कमजोर पौधे को निकाल दें। बुवाई के समय खेत में पर्याप्त नमी होनी चाहिए। जिससे बीजों का अंकुरण शीघ्र व एक समान हो सके। बीज की बुवाई 3–4 सें.मी. की गहराई पर करनी चाहिए। बुवाई के 8–10 दिन बाद यदि किसी स्थान पर पौधे मर गए हो या अंकुरण न हुआ हो तो उस स्थान पर बीज पुनः बोया जा सकता है। बुवाई पूरब–पश्चिम दिशाओं में करनी चाहिए जिससे सभी पौधों को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में और लम्बी अवधि तक मिलता रहे। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि बुवाई कभी भी छिटकवां विधि से न करें। जिन क्षेत्रों में जलभराव की समस्या रहती है वहां पर कपास की बुवाई मेड़ों पर करनी चाहिए।

खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

जहां तक हो सके किसान भाइयों को खेत की मिट्टी की जांच

सिंचाई प्रबंधन

गहरा जड़ तन्त्र होने के कारण कपास के पौधों में काफी गहराई से पानी खींचने की क्षमता होती है। कपास की फसल में अंकुरण, पौधे वृद्धि, पुष्पन व गूलर बनते समय भूमि में नमी की अधिक आवश्यकता होती है। अतः इस समय अनिवार्य रूप से सिंचाई करें। सामान्य कपास की फसल में 4–5 सिंचाई की

आवश्यकता पड़ती है। फूलने–फलने के समय अत्यधिक नमी का कपास की पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। कपास की फसल स्थिर पानी (जलभराव) के प्रति अति संवेदनशील है। अतः फालतू पानी को खेतों से तुरन्त बाहर निकाल दें।

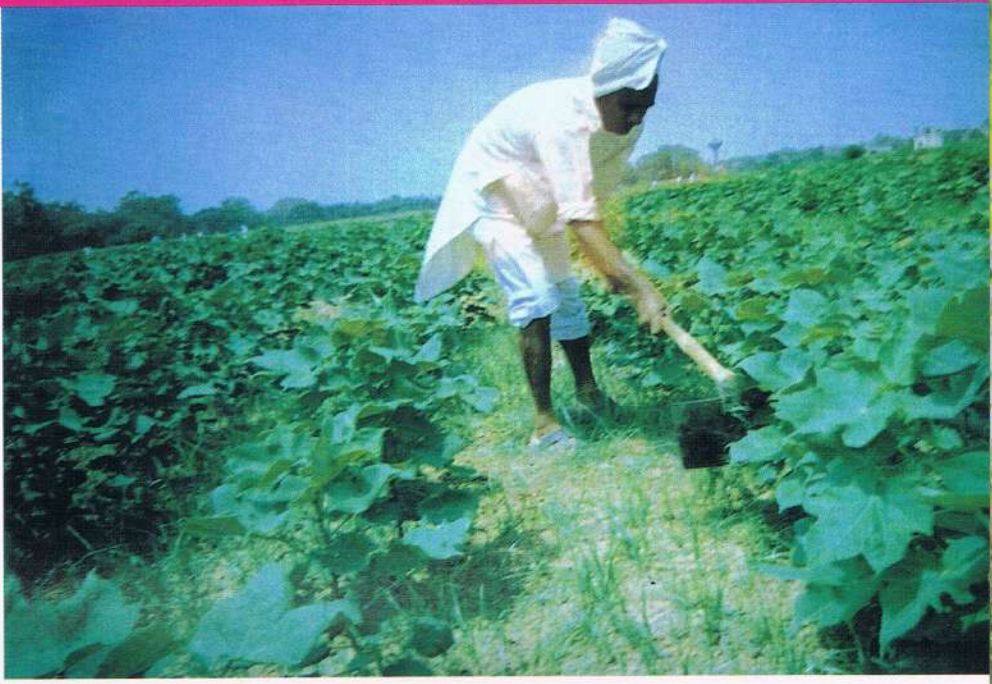

कपास की फसल में पानी देता किसान

खरपतवार नियंत्रण

कपास की फसल में खरपतवारों की बढ़वार को रोकने के लिए समय–समय पर निराई–गुड़ाई करते रहना चाहिए जिससे भूमि के अन्दर नमी का संरक्षण एवं वायु आवागमन सुचारू रूप से हो सके। वर्षा आधारित कपास की फसल में खरप़तवारों की कम समस्या होती है। सिंचित फसल बुवाई के 50–60 दिनों तक खरपतवारों से मुक्त रहनी चाहिए। खरपतवार फसल में दिए गए पोषक तत्वों व पानी का अवशोषण कर लेते है जिसका फसल की पैदावार व गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पडता है। अगर निराई–गुड़ाई सम्भव न हो तो खरपतवारों को नियंत्रण करने के लिए शाकनाशियों का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिए कपास की बुवाई के बाद परन्तु अंकुरण से पूर्व पेन्डिमेथिलीन दवा का 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टेयर की दर से छिड़काव करके साठी किस्म के खरपतवारों का पूरी तरह से सफाया किया जा सकता है। किसान भाई ध्यान रखे कि जिस स्प्रे मशीन से 2,4–डी शाकनाशी का छिड़काव किया गया हो उसे छिड़काव के लिए कपास में प्रयोग न करें।

पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए कपास की फसल में ड्रिप सिंचाई प्रणाली

सहफसली खेती

कपास एक लम्बी अवधि वाली फसल है। साथ ही कपास की दो पक्तियों के बीच अधिक फासला होता है। इसकी प्रारम्भिक बढ़वार भी बहुत धीरे–धीरे होती है। ऐसी परिस्थितियों में कपास की फसल के साथ अन्य अल्प अवधि वाली फसलों की सहफसली खेती करना लाभदायक पाया गया है। पंजाब, हरियाणा, राजस्थान व उत्तर प्रदेश के अनेक भागों में कपास के साथ मूंगफली, सोयाबीन, मूंग, उड़द, तिल, रागी, मिर्च व ग्वार की अन्तः फसली खेती बहुतायत में की जाती है। ऐसा करने से किसानों को कपास के साथ अतिरिक्त आमदनी मिल जाती है जो खाद्य, दाल, तेल व चारे इत्यादि आवश्यकताओं की भी पूर्ति करती है। साथ ही कीटों, बीमारियों, कम वर्षा या अन्य किसी कारण से मुख्य फसल (कपास) के साथ दलहनी फसलों की अन्तः फसल खेतों को दोबारा उपजाऊ बनाने में भी सहायक है। कपास की दो पक्तियों के मध्य में उड़द, मूंग, मूंगफली व सोयाबीन की दो पंक्तियां बोना लाभदायक पाया गया है। इससे न केवल फार्म संसाधनों का उचित उपयोग होता है। बल्कि प्रति इकाई क्षेत्र शुद्ध मुनाफा भी बढ़ता है। सहः फसली खेती में खरपतवारों को भी पनपने का मौका नहीं मिलता है। इसी तरह दक्षिण भारत में किसान भाई कपास के साथ मक्का, ज्वार, रागी, सॉवक, तिल व मूंगफली की सहफसली खेती कर सकते है।

कपास की फसल

रोग, कपास का पत्ती मरोड़ रोग, कपास का मुरझाना, सुखा जड़ गलन व पत्तियों का झुलसा रोग प्रमुख है। कपास में बीज व मृदा जनित रोगों से बचाव हेतु बीज उपचार अवश्य करें। स्वस्थ बीज व रोगरोधी प्रजातियों की बुवाई करें। इसके अलावा रोगग्रस्त पौधों को उखाड़ कर नष्ट कर दें। पत्ती मरोड़ एक विषाणु रोग है। यह रोग सफेद मक्खी द्वारा फैलता है। रोग ग्रसित पौधों की बढ़वार धीमी हो जाती है। साथ ही पौधों पर फूल व गूलरों की संख्या कम हो जाती है। बुवाई से पूर्व अप्रैल माह में खेत व आस–पास खड़ी कंधी बूटी व पीली बूटी के पौधों को उखाड़ कर फेंक दें। जुलाई–अगस्त माह में रोग ग्रसित इक्के–दुक्के पौधों को उखाड़कर जला दें।

प्रमुख कीट एवं उनका नियन्त्रण

कपास की फसल में कीटों का अत्यधिक प्रकोप होता है। कपास की फसल में निम्न एकीकृत कीट प्रबन्धन की सिफारिश की जाती है। इसके लिए गर्मी के मौसम में खेतों की गहरी जुताई करें। जिससे मिट्टी में छिपे कीट–पतंगे और उनके अंडे व लारवा नष्ट हो जाये। खेतों के आस–पास साफ–सफाई रखें। मेड़ों पर उगे खरपतवारों को नष्ट कर दें। बी.टी. कपास की संकर प्रजातियों को उगाना चाहिए क्योंकि इन पर कीटों का कम प्रकोप होता है। इसके अलावा कीट नियन्त्रण के लिए ट्रैप क्राप, फिरोमोन ट्रैप, प्राकृतिक शत्रुओं का उपयोग, जैविक कीटनाशक आदि का कपास की खेती में उपयोग किया जा सकता है। रस चूसने वाले कीटों का प्रकोप यदि निम्नतम आर्थिक स्तर के नुकसान को पार कर जाये तो फसल वृद्धि की किसी भी अवस्था में सिफारिश किए गए कीटनाशकों का छिड़काव करें।

गूलर की सूड़ियों से बचाव के लिए एन्डोसल्फान (35 ई.सी) या मोनोक्रोटोफास की 2 मि.ली. मात्रा प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 1–2 बाल छिड़काव करें। एक हैक्टेयर क्षेत्र में छिड़काव के लिए 500–700 लीटर घोल पर्याप्त होता है। एक ही प्रकार के कीटनाशक का पुनः छिड़काव न करें।

रोग एवं उनका निदान

कपास की फसल में लगने वाले प्रमुख रोगों में जीवाणु झुलसा

कीट का नाम	निम्नतम आर्थिक नुकसान का स्तर
सफेद मक्खी	8–10 निम्फ या प्रौढ़ प्रति पत्ती
चैंपा	10 प्रतिशत पौधे प्रभावित होने पर
तेला	1–2 निम्फ प्रति पत्ती
थ्रिप्स	10–12 निम्फ प्रति पत्ती

उपज

कपास की फसल में उन्नतशील प्रजातियों तथा उपयुक्त दी गयी विधियों को अपनाने पर 20–25 कुन्तल/हैक्टेयर पैदावार ली जा सकती है। जबकि बी.टी. कपास की फसल से 30–35 कुन्टल/हैक्टेयर उपज मिल जाती है। किसान भाई ध्यान रखें कि बी.टी. कपास की खेती में हर बार नया बीज प्रयोग करें।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के सस्य विज्ञान संभाग में तकनीकी अधिकारी हैं।)

ई–मेल : v.k.agro@yahoo.co.in

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग

पूर्वी खंड-4, तल-7

रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये

विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)

पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

ताईवानी पपीते की व्यावसायिक खेती

चन्द्रभान यादव

ताईवानी पपीते की खासियत यह है कि इसके प्रत्येक पौधे से फल प्राप्त होते हैं। किसान इस ताईवानी पपीते को आसानी से लंबी दूरी के बाजार में भी भेज सकते हैं जोकि अन्य पपीते की किस्मों में संभव नहीं है। इस पपीते की संग्रहण क्षमता और मिठास भी अन्य पपीतों की किस्मों की तुलना में अधिक होती है। पपीता अन्य फसलों की तुलना में अधिक फायदा देने वाली फसल है।

राजस्थान की राजधानी जयपुर के चौमूं कस्बे से करीब 5 किलोमीटर दूर गांव नीमड़ी ताईवानी पपीते को लेकर सुर्खियों में है। यहां के पपीते न सिर्फ राजस्थान बल्कि दूसरे प्रदेशों में भी धाक जमाए हुए हैं। ताईवानी पपीते की व्यावसायिक खेती शुरू की है गणेश सैनी ने। गणेश सैनी बताते हैं कि इस खेती से उनकी माली हालत में सुधार होते देख, पड़ोसी किसान भी खेती में जुट गए हैं। वह बताते हैं कि नॉन यू सीड कंपनी के मैनेजर से उनकी मुलाकात हुई। उन्होंने बीज मुहैया कराया और अब उसके खेत में फसल तैयार हो गई है। वह बताते हैं कि अब विभिन्न स्थानों के किसान उसकी फसल देखने के लिए आते हैं। इतना ही नहीं वे इसकी खेती की जानकारी के लिए बाकायदा प्रशिक्षण भी लेते हैं। कंपनी की ओर से भी इस खेती में रुचि लेने वाले किसानों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है।

कैरीकेसिया परिवार के इस पौधे को कैरिका पपाया भी कहते हैं। यह पांच से दस मीटर लंबा होता है। करीब एक मीटर से अधिक लंबाई होने पर इसमें फल लगने लगते हैं। जैसे–जैसे इसकी लंबाई बढ़ती है वैसे–वैसे फलों का गुच्छा भी ऊपर बढ़ता जाता है। इसकी पत्तियां 50 से 70 सेंटीमीटर की होती हैं।

आमतौर पर पपीता पहले मैक्सिको, सेंट्रल अमेरिका में ही पाया जाता था, लेकिन समय के साथ इसका प्रसार बढ़ा। अब लगभग सभी देशों में इसकी खेती होती है। भारत के साथ ही ताईवान,

श्रीलंका, दक्षिणी अफ्रीका और ब्राजील में इसकी बड़े पैमाने पर औद्योगिक खेती हो रही है।

नर्सरी तैयार करने का तरीका

ताईवानी पपीते की नर्सरी तैयारी करने के लिए सर्वप्रथम 4 बाई 6 की थैली में एक भाग सड़ा हुआ गोबर का खाद व 3 भाग मिट्टी का अच्छी तरह मिश्रण किया जाता है। थैली के चारों ओर आलपीन से छेद किए जाते हैं। इसके बाद बीज को 12 घण्टे तक पानी में भिगोने के बाद छांव में सुखाया जाता है। इसके बाद 2 ग्राम वावेस्टिन 10 ग्राम बीज में मिलाएंगे। बीज को आधा इंच गहरा मिट्टी में दबाया जाता है, और लगभग 84 दिनों तक निरन्तर पानी दिया जाता है। इसके बाद यह नर्सरी पूर्ण रूप से खेत में लगाने के लिए तैयार होती है। इस नर्सरी में पौधे से पौधे की दूरी 6 फीट व लाइन से लाइन की दूरी 8 फीट की रखी जाती है।

उत्पादन की स्थिति

हर पौधे में लगभग 120 से 140 किलोग्राम तक उत्पादन होता है। किसान गणेश सैनी ने बताया कि एक एकड़ में एक हजार प्लांट लगाए गए हैं। यह फसल 24 माह की है। इसमें नौ माह पश्चात् पपीते की पैदावार शुरू हो जाती है। इस बार उन्हें उम्मीद है कि इस फसल से लगभग 6 से 7 लाख रुपए तक की आय होगी। यह फसल अन्य फसलों की तुलना में कम खर्चीली व ज्यादा मुनाफा देने वाली है।

दूसरे किसानों में बढ़ी ललक

नॉन यू सीड कंपनी के ब्रांच मैनेजर राकेश सैनी का कहना है कि पपीते की खेती के लिए किसानों को जागरूक करने में काफी मशक्कत करनी पड़ी, लेकिन प्रगतिशील किसान गणेश ने उनकी बात को समझा और ताईवानी पपीते की फसल बोने को तैयार हुआ। अब उसकी देखा–देखी दूसरे किसान भी खेती में जुट गए हैं। यह फसल अन्य फसलों की तुलना में अधिक लाभकारी साबित हो रही है।

प्रयोग

पपीते का फल कच्चा एवं पक्का दोनों तरह से खाया जाता है। कई स्थानों पर इसकी सब्जी बनाई जाती है तो कुछ लोग सलाद में प्रयोग करते हैं। पपीते का अचार भी बनाया जाता है। कच्चे पपीते में विटामिन छह फीसदी, बी1 तीन फीसदी, बी2 तीन फीसदी, बी3 तीन फीसदी, बी6 आठ फीसदी पाया जाता है। इसी तरह विटामिन सी सर्वाधिक 103 फीसदी पाया जाता है। इसके अलावा कैल्शियम दो फीसदी, मैग्नेशियम तीन फीसदी, फास्फोरस एक फीसदी, पोटेशियम पांच फीसदी पाया जाता है।

प्राचीन चिकित्सा पद्धति

पपीते का प्रयोग प्राचीनकाल से होता रहा है। कच्चे पपीते का दूध दाद, खाज, खुजली पर लगाने से सप्ताह भर में लाभ मिलता है। इसका फल खाने से हाईब्लड प्रेशर कंट्रोल हो जाता है। विभिन्न चर्म रोगों में भी यह लाभकारी साबित हुआ है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेल : ychandrabhan@yahoo.com

विटामिन सी से भरपूर संतरा

आभा जैन

संतरा अस्वस्थ को स्वथ्य तथा स्वस्थ को बलवान बनाता है। एनफ्लूएंजा की बीमारी में एक प्याला संतरे का रस हर 3–4 घंटे के अंतराल पर रोगी को देना चाहिए। यदि एक गिलास संतरे के रस का प्रतिदिन सेवन किया जाए तो मनुष्य लम्बी आयु प्राप्त करता है। संतरे के रस के नियमित सेवन से खून की कमी, नेत्रों की जलन, थकान, तनाव आदि में लाभ होता है। संतरे में विटामिन सी की प्रचुरता होती है अतः आंख, कान, नाक, गला व त्वचा की बीमारियों में लाभप्रद है। आंवले के पश्चात सबसे अधिक विटामिन सी संतरे में ही पाया जाता है। मानसिक तनाव, रक्तचाप वृद्धि तथा हृदय व मस्तिष्क की गर्मी के विकारों, अजीर्ण, कोष्ठबद्धता आदि में इसका रस बहुत ही उपयोगी व लाभकारी है। मानसिक श्रम करने वाले जैसे विद्यार्थी, चिकित्सक प्रबन्धक, वकील, इंजीनियर इत्यादि लोगों को संतरे का इस्तेमाल अवश्य ही करना चाहिए।

संतरा नींबूवंशीय किस्मों में सबसे उपयोगी एवं प्रचलित फल है। भारत के महाराष्ट्र में नागपुर व राजस्थान में झालावाड़ जिले के भवानीमण्डी संतरा उत्पादन में अपना मुख्य स्थान रखते हैं। संतरा लोकप्रिय फल है क्योंकि गर्मी में संतरा सस्ता व सरलता से प्राप्त हो जाता है। संतरा खट्टा–मीठा दो प्रकार का होता है। संतरे में विभिन्न गुणों का सम्मिश्रण होता है। कटेसी कुल के इस फल का वैज्ञानिक नाम साइट्रस रेटी कुलाटा है।

संतरे की विशेषताएं

- संतरा ही एक ऐसा फल है, जिसमें नर और मादा दो किस्में होती हैं। नर किस्म को संतरा कहते हैं और मादा किस्म को नारंगी।
- आम, केला, सेब, पपीता, चीकू आदि फलों को पेड़ से कच्चा तोड़ने के बाद कृत्रिम ढंग से पकाया जाता है किन्तु संतरा ही एक ऐसा फल है जो पूरी तरह पेड़ पर ही पकता है।
- संतरा ताजगी और तरावट देने वाले फलों में सर्वश्रेष्ठ है जो मीठा होते हुए भी मधुमेह के रोगियों को दिया जा सकता है। संतरे का रस मानसिक ऊर्जा भी प्रदान करता है।
- संतरे के रस में प्यास मिटाने का अदभुत गुण है। इसके उपयोग से बार–बार लगने वाली प्यास मिट जाती है। बुखार में और गर्मी के दिनों में इसके समान तृप्तिदायक कोई दूसरा पेय नहीं है।

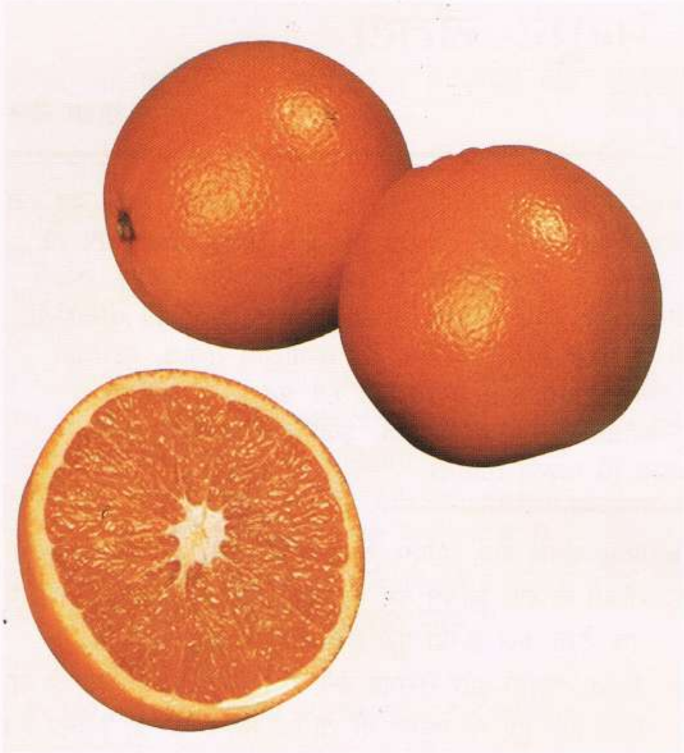

संतरा स्वास्थ्य के लिए प्रकृतिप्रदत्त, अनुपम, उत्तम, श्रेष्ठ व आदर्श उपहार है। संतरा हमारे देश का बहुत प्राचीन फल है। आयुर्वेद के ग्रंथों जैसे चरक सुश्रुत आदि में इसका विस्तृत व विशद उल्लेख मिलता है। आयुर्वेद के प्रसिद्ध चिकित्सक महर्षि चरक और सुश्रुत ने संतरे को भोजन में रुचि पैदा करने वाला, आमाशय एवं आंतों की सफाई करने वाला, वायु विकार को नष्ट करने वाला और हृदय को बल देने वाला बताया है। संतरे में 23 स्वास्थ्यवर्द्धक गुण पाए जाते हैं। यूरोपवासी इसे बेहद उपयोगी मानकर इसे गोल्डन एप्पल के नाम से पुकारते हैं तथा हम इसे अमृत फल की संज्ञा दे सकते हैं।

संतरे में विटामिन सी व डी का अदभुत मिश्रण होता है क्योंकि यह पेड़ पर ही धूप एवं हवा के संयोग से पकता है। अतः संतरा व्यक्ति में रोगनिरोधक शक्ति को बढ़ाता है। इसके साथ ही इसमें ग्लूकोज पडेक्सटीज दो ऐसे तत्व होते हैं जो जीवनदायिनी शक्ति से परिपूर्ण होते हैं। इसलिए संतरा न केवल रोगी के शरीर में ताज़गी लाता है अपितु अनेक रोगों के लिए भी उपयोगी संतरे के रस में घुलनशील कार्बोहाइड्रेट, ग्लूकोज, फ्रक्टोज, सुक्रोज, कार्बनिक एसिड भरपूर मात्रा में होते हैं। विटामिन सी, विटामिन बी काम्पलेक्स, विटामिन ए खनिज़ तत्व एवं अन्य पोषक तत्व होने के कारण इस फल की गणना पौष्टिक आहार के रूप में भी की जाती है। पौष्टिकता की दृष्टि से यह दूध से भी अधिक उपयोगी है। इसका प्रयोग दुर्बल अवस्था में भी किया जा सकता है। ज्वर के रोगी को संतरे का रस देने से उसे शांति और शक्ति मिलती है। मुंह सूखने व प्यास लगने की शिकायत दूर होती है। शरीर में खुश्की नहीं बढ़ने पाती है। इसे दिन में बार–बार पिला सकते हैं। प्रातःकाल नाश्ते में दो–तीन संतरों का रस पीने से कुछ ही दिनों में कब्ज से छुटकारा मिल जाता है।

संतरा अस्वस्थ को स्वथ्य तथा स्वस्थ को बलवान बनाता है। एनफ्लूएंजा की बीमारी में एक प्याला संतरे का रस हर 3–4 घण्टे के अंतराल पर रोगी को देना चाहिए। यदि एक गिलास संतरे के रस का प्रतिदिन सेवन किया जाए तो मनुष्य लम्बी आयु प्राप्त करता है। संतरे के रस के नियमित सेवन से खून की कमी, नेत्रों की जलन, थकान, तनाव आदि में लाभ होता है।

संतरे में विटामिन सी की प्रचुरता होती है अतः आंख, कान, नाक, गला व त्वचा की बीमारियों में लाभप्रद है। आंवले के पश्चात सबसे अधिक विटामिन सी संतरे में ही पाया जाता है। मानसिक तनाव, रक्तचाप वृद्धि तथा हृदय व मस्तिष्क को गर्मी के विकारों, अजीर्ण, कोष्ठबद्धता आदि में इसका रस बहुत ही उपयोगी व लाभकारी है। मानसिक श्रम करने वाले जैसे विद्यार्थी, चिकित्सक प्रबन्धक, वकील, इंजीनियर इत्यादि लोगों को संतरे का इस्तेमाल अवश्य ही करना चाहिए।

बीमारी की हालत में रोगी के लिए संतरे का रस पानी, हवा और भोजन का काम करता है। यह पेट की गर्मी को रोकता है व मुंह के जायके को सुधारता है। नियमित संतरे का इस्तेमाल करने से पायरिया, मसूड़ों के रोगों से छुटकारा मिल जाता है। छोटे शिशुओं को मीठे संतरे का रस थोड़ी–थोड़ी मात्रा में पिलाने से उनका शरीर हष्ट–पुष्ट होता है, रक्त शुद्ध होता है। जो बच्चे कमजोर हो या सूखा रोग से पीड़ित हो, बच्चों का विकास धीरे–धीरे हो रहा हो, उन्हें प्रतिदिन पूरे मौसम संतरे का रस अवश्य ही दिया जाना चाहिए।

हर गर्भवती महिला की यह अभिलाषा होती है कि वह बिना प्रसव पीड़ा सहे स्वस्थ सुन्दर शिशु को जन्म दे। इसके लिए महिलाओं को प्रतिदिन एक गिलास संतरे का रस या सुबह दोपहर, शाम एक–एक संतरा एक माह तक अवश्य सेवन करें। पाचन संस्थान के रोगियों को चाहिए कि वह संतरे का रस गर्म करके काला नमक और सोंठ का चूर्ण पीसकर मिलाकर लें। आमाशय के रोग में यह पेय रामबाण है।

पेड़ पर संतरे

गुणकारी काली मिर्च

काली मिर्च को यूरोप में 16वीं शताब्दी से "काले सोने" के नाम से जाना जाता था। आयुर्वेद में काली मिर्च को "युक्त्या चैत्र रसायनम" कहा गया है। आयुर्वेद के अनुसार काली मिर्च सुगंधित, पाचक, स्वेदकर, अग्निदीपक, कफ, श्वास, शूल, कृमि रोगनाशक होती है। काली मिर्च उन कतिपय जड़ी–बूटी औषधियों में से है जिन्हें आयुर्वेद में प्रभावी बताया गया है जो शरीर के विभिन्न मार्गों के व्यवधानों को मुक्त करता है। आयुर्वेद में काली मिर्च को पोषक, उत्तेजक, सुगंधित टॉनिक बताया गया है। यह निस्तारण व पेट के कीड़ों को दूर करने के अलावा लाल ग्रंथि को उत्तेजित करती है।

हकीम गिलानी के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति को भोजन के साथ काली मिर्च खिलाने से उसकी भूख बढ़ती है। पानी व शहद के साथ प्रयोग करने से खट्टी डकारे आना बंद हो जाती हैं। मंदाग्नि कली, रक्तातिसार व पाकस्थली जैसे रोगों में भी इसे उपयोगी पाया गया है।

हकीम जालनूस का कहना है कि काली मिर्च को पीसकर तेल मिलाकर लेप करने से लकवे के रोगी को लाभ होता है।

धन्वन्तरि काली मिर्च को सभी प्रकार के बैक्टीरिया और वायरस आदि को नष्ट करने वाला मानते हैं। इसमें उपलब्ध पाइपरीन नामक तत्व कीटनाशक होता है। इसमें निहित औषधि रसायनों का उद्दीपक प्रभाव आमाशय, आंतों, गुर्दों की श्लेष्मा पर होता है। इसका सेवन पाचक रस, जठर रसस्राव और मूत्र की मात्रा में वृद्धि का कारक बनता है। काली मिर्च की तिक्तता के कारण इसका प्रभाव अपच, अग्निमाघ, अफरा अतिसार, संग्रहणी, कृमिरोग आदि पर पड़ता है। सफेद मिर्च आंखों की रोशनी है तथा त्वचा की कांति बढ़ाती है।

कालीमिर्च पाईपेसी परिवार का औषधयुक्त मसाला है जिसका वानस्पतिक नाम पाइपर निग्रम एल है। वनौषधि चन्द्रोदय में काली मिर्च के अनेक व्याधियों को दूर करने के उपयोग व प्रयोगों का सविस्तार उल्लेख किया गया है।

- काली मिर्च को दही के साथ घिसकर आंखों में लगाने से रतौंधी मिट जाती है।
- काली मिर्च को पीसकर दही व पुराने गुड़ के साथ देने से नाक से गिरने वाला खून बंद हो जाता है।
- काली मिर्च को घी में मिलाकर सेवन करने से नेत्र रोगों में लाभ होता है।

वायरसनाशक काली मिर्च

गुणकारी काली मिर्च

- हिचकी के लिए काली मिर्च को एक दो दाना जलाकर फिर इसके धुंए को नाक से खींच लें। इससे तुरंत आराम होगा तथा सिर दर्द में भी आराम पहुंचेगा।
- चर्म रोगियों को काली मिर्च और घी का सेवन करने पर हर प्रकार के चर्म रोगों में लाभ होता है।
- दो तीन बड़े लाल टमाटर काटकर सेंधा नमक और काली मिर्च लगाकर खाली पेट कुछ दिनों तक खाने से पेट के कीड़े दूर हो जाते हैं।
- गैस की शिकायत होने पर एक प्याले पानी में आधे नींबू का रस डालकर 1/4 चम्मच काली मिर्च का चूर्ण और काला नमक मिलाकर कुछ दिनों तक नियमित सेवन करें।
- मानसिक श्रम करने वालों को 2/3 काली मिर्च पीसकर एक चम्मच शुद्ध घी और एक चम्मच शक्कर के साथ सेवन करें। गर्मी के दिनों में बनाई जाने वाली ठंडाई में काली मिर्च अवश्य डाले। काली मिर्च के उपयोग से स्मरण शक्ति बढ़ती है।
- काली मिर्च, सोंठ, पीपल, जीरा, सेंधा नमक सभी को समभाग मिलाकर पीसकर चने के आकार की गोलियां बना लें, भोजन के बाद 2/3 गोलियां लें मंदाग्नि दूर होती है।
- मुंह में छाले होने की हालत में पांच–छह काली मिर्च और पांच छह किशमिश लेकर चबायें। दो–चार बार ऐसा करने से छाले दूर हो जाते हैं।
- खटट्री डकारें आ रही हों या अपच जैसी शिकायत हो तो नींबू के दो टुकड़े करके उन्हें आंच पर हल्का–सा गर्म करें। इन पर काली मिर्च का चूर्ण बुरक कर चूसें, लाभ मिलेगा। टायफाइड के मरीजों को भी नींबू चूसना लाभप्रद रहता है। मुंह का जायका सुधर जाता है।
- सर्दी, खांसी, जुकाम में काली मिर्च रामबाण औषधि है।
- काली मिर्च व तुलसी का गर्मागर्म काढ़ा गले को काफी राहत पहुंचाता है।
- गला बैठ जाने पर भोजन के बाद काली मिर्च का चूर्ण घी में मिलाकर रुक–रुककर खाएं, गला ठीक हो जाएगा।
- सर्दी–जुकाम में एक गिलास गर्म दूध में थोड़ी–सी काली मिर्च का चूर्ण हल्दी पाउडर मिलाकर सेवन करें, सर्दी–जुकाम जल्दी ठीक हो जाएगा।
- काली मिर्च का चूर्ण डालकर उबला हुआ दूध पीने से खांसी मिटती है।
- अमरूद, तरबूज, सेवफल, जामफल, टमाटर इत्यादि फलों तथा अधिकांश फलों के रस में काली मिर्च का चूर्ण बुरकें, स्वाद में बढ़ोतरी होगी।

(लेखिका स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले।

आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। हमारा पता है - वरिष्ठ संपादक, कुरुक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली-110001

आप हमें लेख ई-मेल भी कर सकते हैं।

ई-मेल : kuru.hindi@gmail.com

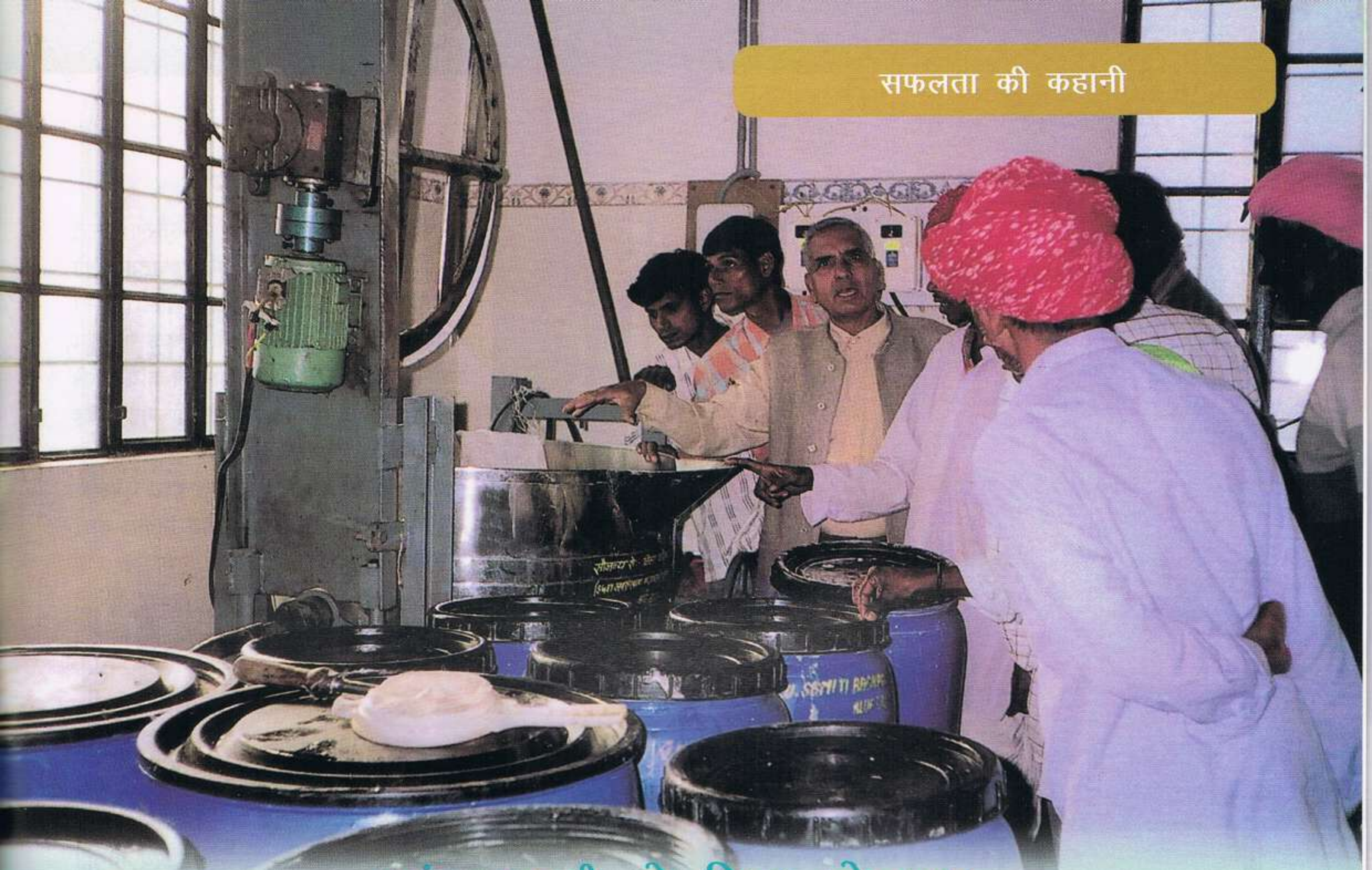

आंवलाबाड़ी से मिला रोजगार

प्रतापमल देवपुरा

बाघपुरा गांव में 1997 में वक्ता जी ने सर्वप्रथम आंवलाबाड़ी लगाई जिसमें 40 पेड़ लगाए। अब प्रत्येक पेड़ से उन्हें प्रतिवर्ष लगभग 800 से 1200 रुपये की आमदनी हो रही है। बॉयफ के सहयोग से पूरे 300 गांव में आंवला उत्पादन को व्यावसायिक रूप देकर पूरी पंचायत के 3000 लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। इस तरह यह गांव आंवलाबाड़ी लगाकर रोजगार के मामले में आत्मनिर्भर हो गया है। इस गांव की आंवलाबाड़ी की चर्चा दूर-दूर तक है जिसे देखने के लिए वर्ष 2008 में आसपास के गांवों में लगभग 500 ग्रामीण आए और वे भी अब अपने यहां आंवलाबाड़ी लगाने की योजना बना रहे हैं।

राजस्थान में उदयपुर शहर से लगभग 45 किलोमीटर की दूरी पर आदिवासी तहसील झाड़ोल–फलासिया की बाघपुरा पंचायत का दृश्य– आसपास का क्षेत्र–आंवलों के पेड़ों से आच्छादित हर किसान के खेतों में 50 से 100 आंवलों के पेड़, प्रत्येक टहनी प्राकृतिक चमक लिए अच्छी किस्म के बड़े–बड़े आंवलों के भार से झुकी हुई।

यह है एक आंवलाबाड़ी, श्री वक्ता जी की। वक्ता जी बताते हैं "मैने सन् 1997 में सर्वप्रथम बाघपुरा (झाड़ोल) में एक स्वयंसेवी संस्था 'बायफ' के सहयोग से आंवलाबाड़ी लगाई जिसमें 40 पेड़ लगाए। आजकल प्रत्येक पेड़ से प्रतिवर्ष लगभग 800 से 1200 रुपये की आय प्राप्त हो रही है। आंवलाबाड़ी के साथ–साथ मेरा परिवार पशुपालन व वर्मी कम्पोस्ट के काम से भी जुड़ा हुआ है जिससे अच्छी आमदनी हो जाती है।" डेयरी का कार्य उनकी पत्नी मनुबाई सम्भालती हैं। पारम्परिक वेशभूषा पहने मनुबाई ने बताया कि उनके यहां 10–15 गायें हैं जिनसे उन्हें प्रतिदिन 100 लीटर दूध प्राप्त होता है। दूध को रखने के लिए उन्होंने जिला परिषद की एसजीएसवाई योजना से मिल्क फ्रिजर ले रखा है जिसमें गांव से 500 लीटर दूध संग्रहित कर उसे उदयपुर सरस डेयरी भेजा जाता है। आंवलाबाड़ी, डेयरी व वर्मी कम्पोस्ट उद्योग से वक्ताजी का परिवार आर्थिक रूप से मजबूत हुआ है। इस समूह से जुड़े ऐसे अनेक परिवारों की आर्थिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार हुआ है। इस क्षेत्र के एक सर्वे के अनुसार 92 प्रतिशत गरीब परिवार अब गरीबी रेखा से ऊपर की श्रेणी में आ गए हैं।

आंवला कैंडी के साथ कार्यरत ग्रामीण

आंवला प्रसंस्करण प्लांट

मांगीलाल ने आंवला प्रसंस्करण प्लांट का निरीक्षण भी करवाया। आंवला उत्पादों को बनाने के लिए उपयोग में आने वाले विभिन्न उपकरणों जिनमें मुख्यतः ऑटोमेटिक फिलिंग मशीन, इलैक्ट्रिक व सोलर ड्रायर की कार्यप्रणाली के बारे में विस्तृत जानकारी दी गई। यह मशीनरी स्वर्ण जयंती स्वरोजगार योजना के अन्तर्गत जिला परिषद्, उदयपुर द्वारा उपलब्ध करवाई गई है। उन्होंने स्थानीय विक्रय केन्द्र भी दिखाया। जब उनसे पूछा गया कि पौधे कैसे लगाएं, खाद, पानी किस प्रकार दें, तो बॉयफ विशेषज्ञों ने जिज्ञासा का समाधान किया।

मै यह सब देखकर चकित था कि किस प्रकार यह गांव आंवलाबाड़ी लगाकर रोजगार के मामले में आत्मनिर्भर हो गया है। बाघपुरा सहकारी समिति के अध्यक्ष श्री मांगीलाल तेली पंचायत में जनप्रतिनिधि रहे हैं। उन्होंने इस कार्य के लिए बॉयफ संस्था को श्रेय दिया। आज बाघपुरा का प्रत्येक व्यक्ति गर्व महसूस करता है कि उनके स्वयंसहायता समूह बनाने व सहकारिता की भावना तथा कड़ी मेहनत अब अन्ततः रंग लाई। आज सफलता उनके कदम चूम रही है। वर्ष 2008 में इस कारखाने व आंगनबाड़ी को देखने के लिए दूर–दूर से लगभग पांच हजार ग्रामीण आ चुके हैं। सभी दर्शक इस उपलब्धि से काफी प्रभावित हुए हैं। वे भी अपने यहां आंवलाबाड़ी लगाने की योजना बना रहे हैं।

आंवलाबाड़ी ने आबाद किया पंचायतों को

आंवला उत्पादन सहकारी समिति के अध्यक्ष मांगीलाल तेली से मिलकर अपनी जिज्ञासा व्यक्त की तो उन्होंने बताया कि किस प्रकार एक स्वयंसहायता समूह से आरम्भ कर आज आंवला उत्पादन को व्यावसायिक रूप देकर पूरी पंचायत के 3000 लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा रहा है। मांगीलाल ने बताया कि आंवला उत्पादन कार्य 1997 में बॉयफ संस्था की मदद से स्वयंसहायता समूह द्वारा बाघपुरा में प्रारम्भ किया गया था। इस क्षेत्र की 5 ग्राम पंचायतों के 21 गांवों में 2200 परिवारों का चयन कर वहां पर विभिन्न नस्लों के आंवला पेड़ लगाए गए। चार–पांच वर्ष पश्चात् पेड़ों से आंवलों की अच्छी आवक होने लगी। पूरे क्षेत्र में प्रतिवर्ष लगभग 20 टन आंवलों का उत्पादन होने लगा। परन्तु किसानों को पूरा लाभ नहीं मिला। सन् 2002–03 में आंवला उत्पादन सहकारी समिति का निर्माण कर आंवला के उत्पाद बनाने का निर्णय लिया गया। वर्तमान में यह समिति आंवले के बारह उत्पाद तैयार करती है जिनमें से प्रमुख हैं – आंवला लड्डू, मुरब्बा, केण्डी, अचार, आंवला चूर्ण, जूस, शरबत, चटपटी मसाला केण्डी आदि। इन सभी की मार्केटिंग न केवल राजस्थान वरन् गुजरात, महाराष्ट्र, बंगलौर व दिल्ली में भी की जा रही है।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेल : prnd99@rediffmail.com

हमारे आगामी अंक

जुलाई, 2009—ग्रामीण हस्तशिल्प।

अगस्त, 2009—बदलते परिवेश में पंचायतों की भूमिका विषयों पर आधारित होंगे।

इसके अतिरिक्त ग्रामीण विकास, कृषि, रोजगार व स्वास्थ्य से संबंधित लेख भी इनमें शामिल किए जाएंगे। उपरोक्त विषयों पर सारगर्भित लेख (आम बोलचाल की भाषा में) व फोटो हमें भेजे जा सकते हैं। पत्रिका के प्रकाशन की तिथि आगामी माह से तीस दिन पूर्व होती है। अतः प्रकाशन सामग्री कम से कम 45 दिन पूर्व हमें मिल जानी चाहिए।

अब उपलब्ध हैं

वार्षिक संदर्भ ग्रंथ

भारत 2009

**देश के विकास की
विश्वसनीय और अद्यतन जानकारी के लिए**

मूल्य: 345 रुपये

* अर्थव्यवस्था
* विज्ञान और तकनीक
* सामाजिक विकास
* राजनीति
* शिक्षा
* कला और संस्कृति

अपनी प्रति यहां से खरीदें :

हमारे विक्रय केंद्र: • **नई दिल्ली** (फोन 24365610, 24367260) • **दिल्ली** (फोन 23890205) • **कोलकाता** (फोन 22488030) • **नवी मुम्बई** (फोन 27570686) • **चेन्नई** (फोन 24917673) • **तिरुअनंतपुरम** (फोन 2330650) • **हैदराबाद** (फोन 24605383) • **बेंगलूर** (फोन 25537244) • **पटना** (फोन 2683407) • **लखनऊ** (फोन 2325465) • **गोवाहाटी** (फोन 26656090)
• **अहमदाबाद** (फोन 26588669)

प्रतियां प्रमुख पुस्तक केन्द्रो में भी उपलब्ध हैं

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें:
व्यापार व्यवस्थापक प्रकाशन विभाग,
सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली
फोन. 011–24365610, 24367260, फैक्स: 24365609

ईमेल: dpd@mail.nic.in
dpd@sb.nic.in
वेबसाइट: www.publicationsdivision.nic.in

प्रकाशन विभाग
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार

DPD B-II-09/2

KH-6-09-2

र. एन./708/57
क–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05/3164/2009–11
ई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
ल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–55/2006–08

R.N./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2009-11
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-55/2006-08
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

प्रकाशक और मुद्रक : वीना जैन, अपर महानिदेशक (प्रभारी), प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्पलेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली-110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना